III केंद्रीय बैंकिंग का कार्यात्मक विकास

3.1 केंद्रीय बैंक, जिनकी शुरुआत ऐसी संस्थाओं की आवश्यकता को देखते हुए की गई जो सरकार एवं बैंकों के लिए अंतिम ऋणदाता का कार्य कर सके, को बाद में मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य प्रबंध का उत्तरदायित्व सौंपा गया। विशिष्टतया आजकल केंद्रीय बैंकों की स्थापना ऐसे निकायों के तौर पर की जाती है जो वित्तीय संस्थानों का नियमन, निम्न मुद्रा स्फीति दर एवं स्थायी विदेशी मुद्रा विनिमय दर सुनिश्चित करते हैं तथा अर्थव्यवस्था के विकास को प्रोत्साहन देते हैं। उन्होंने कारोबार में उतार के दौरान अर्थव्यवस्थाओं को उससे निपटने में सहायता की, जमाकर्त्ताओं को विश्वास दिलाया एवं बैंकिंग संकट के निवारण में सहायता की; उन्होंने सूचना की कमियों के अंतर को भी पाटा, नीति अभिमुख अनुसंधान किया, डाटा बेस का निर्माण किया एवं मौद्रिकनीति तथा समग्र अर्थव्यवस्था से संबंधित आँकड़ों एवं सूचना का प्रसार किया। वास्तव में केंद्रीय बैंकों ने अनेक प्रकार के कार्य संभाल लिए हैं तथा वे बहु-कार्यकारी संस्थाएं बन गए हैं जो मौद्रिक नीति का संचालन करते हैं, बैंकिंग क्षेत्र के नियमन एवं पर्यवेक्षण तथा भुगतान प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं (जाधव, 2003)।

3.2 इस अध्याय की संरचना इस प्रकार है : खंड I में केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धांत एवं व्यवहार का विकास का वर्णन किया गया है। खंड II - केंद्रीय बैंक के मुख्य कार्यों यथा मूल्य स्थायित्व एवं विदेशी मुद्रा विनिमय दर के प्रबंध सहित मौद्रिक नीति कार्य, बैंकों का बैंकर, सरकार का बैंकर एवं वित्तीय स्थायित्व का प्रोत्साहन आदि के विकास का वर्णन करने का प्रयास करता है। इसमें विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों द्वारा संपन्न विकास कार्यों का सविस्तार वर्णन भी किया गया है। खंड III केंद्रीय बैंकिंग क्षेत्र के समसामयिक विषयों जैसे केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता, उत्तरदायित्व, पारदर्शिता एवं विश्वसनीयता पर प्रकाश डालता है। खंड IV अध्याय का परिसमापन करता है।

I. केंद्रीय बैंकिंग का विकास :

3.3 एक केंद्रीय बैंक के अस्तित्व की संगतता एवं आवश्यकता को भली व्यापक स्तर पर स्वीकार किया जाता है। तथापि दशकों से इस विषय पर पर्याप्त चर्चा हुई है कि क्या केंद्रीय बैंकों की स्थापना आवश्यक है। एक वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में एक मुक्त बैंकिंग प्रणाली की परिकल्पना की गई जिसमें ऐसी व्यवस्था की ओर संकेत किया गया जिसमें केंद्रीय बैंक को नोट छापने के अनन्य अधिकार का अभाव होता है तथा सभी बैंक प्रति देय कागजी नोट छापने को समान रूप से स्वतंत्र होते हैं। इस व्यवस्था के ऐतिहासिक उदाहरणों में स्काटलैंड (1716 - 1844) तथा कनाडा (1817 - 1914) शामिल हैं जहाँ पण्य आधारित मुद्रा वाली मुक्त बैंकिंग का प्रचलन था। गृह युद्ध से पहले अमरीका में लगभग मुक्त बैंकिंग जैसी परिस्थितियां विद्यमान थीं। आस्ट्रेलिया, चीन, कोलंबिया, स्विटजरलैंड, फ्रांस, स्वीडन, स्पेन तथा आयरलैंड आदि कुछ अन्य देश है जहाँ उन्नीसवीं शताब्दी में अंशों में मुक्त व्यापार का प्रचलन था। केपी (1997) का तर्क हैं कि बैंकिंग प्रणाली की उपस्थिति में ही एक केंद्रीय बैंक की आवश्यकता महसूस की जाती है । उसका मत है कि बैंकिंग प्रणाली में आने वाली वास्तविक या संभावित समस्याओं के निपटान के लिए ही अधिकांश केंद्रीय बैंकों का विकास हुआ।

3.4 प्रारंभ में केंद्रीय बैंकिंग व्यवहार अनेक अनौपचारिक सिद्धांतों, परंपराओं एवं स्वयं आरोपित आचार-संहिता पर आधारित था। इनको बाद में सिद्धांतों के रूप में मान्यता दी गई तथा कानूनों के रूप में कूटबद्ध किया गया जो आज कल की केंद्रीय बैंकिंग संस्थाओं पर लागू होते हैं। अधिकांश देशों में परिवर्तनशील वित्तीय संरचनाओं से तालमेल बिठाने के लिए समय-समय पर इनमें संशोधन किया गया । केंद्रीय बैंकिंग व्यवहार केंद्रीय बैंकिंग परिचालन के आधारभूत नियमों एवं विवेकाधिकार पर आधारित है। इस प्रकार केंद्रीय बैंकिंग सिद्धांत समय के साथ उभरती हुई समस्याओं पर आधारित हैं। बदले में सिद्धांतों ने भी एक सर्वश्रेष्ठ व्यवहार समुच्चय के विकास को प्रभावित किया है जिन्होनें केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता की संरक्षा, राजनैतिक दबाव से अपना बचाव एवं सामान्यजन के प्रति अपने उत्तरदायित्व की सुनिश्चितता आदि से संबंधित दुविधाओं का समाधान किया है। सिद्धांत एवं व्यवहार का यह आपसी लेनदेन ही उनके संगामी विकास का आधार है।

3.5 प्रथम केंद्रीय बैंक, स्वेरिजिज रिक्सबैंक की स्थापना 1668 में हुई तथा द्वितीय केंद्रीय बैंक, बैंक आफ इंग्लैंड की स्थापना 1694 में रायल चार्टर के अधीन हुई। अधिकांश बड़े यूरोपीय केंद्रीय बैंक उन्नीसवीं शताब्दी में स्थापित किए गए जबकि जर्मन बुंडेस बैंक तथा अमेरिकी फ़ेडरल रिज़र्व प्रणाली की स्थापना बीसवीं शताब्दी में हुई। केपी (1997) ने चिह्नित किया है कि बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में केवल अठारह केंद्रीय बैंक थे। डे काक (1974) के अनुसार प्रारंभिक केंद्रीय बैंकों की स्थापना प्रमुखतया वाणिज्य के वित्तपोषण, वित्तीय प्रणाली के विकास

को प्रोत्साहन एवं नोट निर्गम में समानता लाने के लिए की गई थी। प्रारंभ में बैंक आफ इंग्लैंड सरकार के बैंकर एवं ऋण प्रबंधक के रूप में काम करता था। एक वाणिज्यिक बैंक के तौर पर बैंक आफ इंग्लैंड जमाराशियां स्वीकार करता तथा नोट जारी करता था। 1781 में बैंक आफ इंग्लैंड के चार्टर के नवीकरण के बाद इसका सार्वजनिक कोष के रूप में वर्णन किया गया तथा यह बैंकों का बैंक के रूप में भी कार्य करने लगा। उन्नीसवीं सदी में बैंक आफ इंग्लैंड ने अंतिम ऋणदाता की भूमिका भी अपना ली एवं कई वित्तीय संकटों के दौरान स्थिरता प्रदान की। सन् 1946 में बैंक आफ इंग्लैंड का राष्ट्रीकरण किया गया तथा वह कोष का सलाहकार, एजेंट एवं ऋण प्रबंधक की भूमिका निभा रहा है।

3.6 क्रांति काल में हुई वित्तीय उथल-पुथल के बाद फ्रांसीसी बैंकिंग प्रणाली में विश्वास पुनर्स्थापित करने के लिए सन् 1800 में बैंक डि फ्रांस की स्थापना की गई। बैंको डि पुर्तगाल की स्थापना एक सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी के रूप में 1846 में हुई तथा यह नोट जारी करने वाला वाणिज्यिक बैंक था जिसका प्रमुख उद्देश्य अपने नोटों की परिवर्तनीयता बनाए रखना एवं अंश धारकों के लिए लाभ कमाना था (रीस 1999)।

3.7 सन् 1957 में बुंडेस बैंक अधिनियम के अधीन बुंडेस बैंक स्थापित किया गया। इसका एक पूर्ववर्ती भी था जिसका नाम रीकस बैंक था तथा जो 1876 से 1945 तक कार्यरत था। कुछ अन्य यूरोपीय देशों के विपरीत, जहाँ सत्रहवीं एवं प्रारंभिक अठारहवीं शताब्दी में केंद्रीय बैंकों की स्थापना हुई, जर्मनी में सही मायनों में केंद्रीय बैंकिंग का प्रादुर्भाव देर से हुआ क्योंकि एक स्थायी राज्य केवल सन् 1871 में अस्तित्व में आया। एक समान सिक्का, भार एवं मापन प्रणालियों की स्थापना करने की इच्छा केंद्रीय बैंक की स्थापना का एक कारण थी। बुंडेस बैंक एक संघीय बैंक था जिसने अपनी अलग-2 इकाइयों के शनैः शनैः समेकन में सहायता की। यह आशा की गई कि बुंडेस बैंक बहु प्रणाली व्यवस्था को समाप्त करेगा एवं जर्मनी मे वर्तमान नियमनों का समेकन करेगा। तदनुरूप बुंडेस बैंक ने एक पर्याप्त पारदर्शी मुद्रा व्यवस्था का सृजन किया, गत्यात्मक आर्थिक विकास में सहायक पर्याप्त आधार उपलब्ध किया एवं अलग-अलग निकायों का वित्तीय एकीकरण किया।

3.8 इतालवी बैंकिंग एवं मौद्रिक क्षेत्रों, जो 1890 दशक के प्रारंभ में ध्वस्त होने के कगार पर थे, के सुधारों के एक भाग के रूप में सन 1893 में बैंक ऑफ़ इटली की स्थापना की गई। बैंक का मूलभूत कर्त्तव्य, प्रमुखतया तुलन पत्र को स्वच्छ करके तथा पूंजी आधार के पुनर्निमाण द्वारा, विरासत में मिली समस्याओं से छुटकारा पाना था। इटालियन मुद्रा एवं ऋण प्रणाली में सुधारों का एक दूरगामी लक्ष्य एक एकसमान नियमों एवं संस्थाओं के समुच्चय का सृजन करना था जो इटली की मुद्रा को मजबूत आधार दे तथा संकटों की पुनरावृत्ति को रोके (जेलसोमिनो 1999) बैंक असफलताओं की लहर तथा अंतिम ऋणदाता की आवश्यकता ने अमरीकी फ़ेड की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया, जिससे पहले जनमत का भारी झुकाव मुक्त बैंकिंग की तरफ था।

3.9 जहां केंद्रीय बैंकिंग विकास का अनुभव अलग-अलग देशों में अलग रहा वहीं इसके कुछ सांझे लक्षण भी देखे गए : जहां-जहां समान समस्याओं के लिए केंद्रीय बैंक की स्थापना की गई वहां, यह देखा गया कि उनकी संस्था संरचना एक जैसी थी। विविधताओं के बावजूद कुछ विशिष्ट घटनाओं ने केंद्रीय बैंकों के कार्य, मुद्रा नीति के उपकरणों एवं लक्ष्यों पर विश्वव्यापी प्रभाव डाला। प्रथम विश्व युद्ध की शुरुआत में केंद्रीय बैंकों द्वारा जारी पेपर मुद्रा ने पूर्ण मूल्य धातु सिक्का मुद्रा का स्थान लिया।

3.10 नोटों के वैध मुद्रा बनने तथा उनकी स्वर्ण परिवर्तनीयता समाप्त होने से मुद्रा आपूर्ति पर केंद्रीय बैंकों का नियंत्रण बढ़ा तथा स्थायित्वकरण की नीतियों का पालन संभव हुआ। प्रथम विश्व युद्ध के बाद केंद्रीय बैंकों की भूमिका और महत्वपूर्ण बन गई। उनके वाणिज्यिक बैंकों के कारोबार के पर्यवेक्षण संबंधी भूमिका विस्तार हुआ तथा संकट की स्थिति में बैंकिंग क्षेत्र के स्थिरीकरण हेतु उनकी अंतिम ऋणदाता की भूमिका को सुदृढ़ किया गया। प्रथम विश्व युद्ध के कारण अपनी सरकारों को ऋण देने में उनके योगदान में निरंतर वृद्धि हुई। सार्वजनिक ऋण के प्रबंधक की उनकी नई भूमिका के वहन में उनको समर्थ बनाने के लिए उन्हें सरकारी प्रतिभूतियों का व्यापार करने की आज्ञा दी गई तथा उन्हें ब्याज दरों को न्यूनतम बनाने हेतु मुक्त बाज़ार नीति उपकरण विकसित करने एवं ऋण एवं मुद्रा आपूर्ति विस्तार के अधिकार दिए गए। इससे केंद्रीय बैंकों को अपने परिचालन में और विवेकाधिकार मिले। सन् 1932 से अमरीका में तथा द्वितीय विश्वयुद्ध के तुरंत बाद से जर्मनी में मुद्रा नीति के एक महत्वपूर्ण उपकरण न्यूनतम आरक्षी आवश्यकताओं में परिवर्तन की शक्तियाँ केंद्रीय बैंकों को दी गई।

3.11 ज्यों-ज्यों वित्तीय प्रणालियाँ विकसित हुईं, त्यों-त्यों नई चुनौतियों से मुकाबला करने के लिए केंद्रीय बैंकों द्वारा अपनी नीतियों का पुनर्विन्यास करने की जरुरत पड़ी। वैश्विक संकटों में, जैसे 1930 के दशक की महान मंदी, अधिकांश बैंकों के उत्तरदायित्वों में मौद्रिक स्थिरता, पूर्ण रोजगार को प्रोत्साहन एवं वृद्धि को इष्टतम करना भी शामिल थे। अतः प्रत्येक संकट के बाद केंद्रीय बैंकों की भूमिका का विस्तार हुआ।

3.12 विकसित एवं विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकिंग की उत्पत्ति में अंतर है। परिणामस्वरूप वर्तमान विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों

की भूमिका विकसित देशों की विकास यात्रा अवधि में उनके केंद्रीय बैंकों की तत्कालीन भूमिका से विशिष्ट रूप से अलग है (सेयर्स, 1961; चंदावरकर, 1996) । जहां औद्योगिक देशों में इसका उद्देश्य अंतिम ऋणदाता का अस्तित्व था वहीं विकासशील देशों जैसे भारत में केंद्रीय बैंकों की स्थापना ऐसे समय की गई जब बैंकिंग क्षेत्र अविकसित दशा में था। वास्तव में केंद्रीय बैंकों ने ही वाणिज्यि बैंक नेटवर्कों के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अनेक विकासशील देशों में विकास समर्थक भूमिका निभाने के लिए ही केंद्रीय बैंक अस्तित्व में आए। ऐसे बैंकों ने एक फेसिलिटेटर की भूमिका निभाई। सेक्शन दो में केंद्रीय बैंकों के विकासपरक कार्यों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

3.13 भूतपूर्व विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों एवं वर्तमान संक्रमणकालीन देशों के केंद्रीय बैंकों में लक्षणीय अंतर है। जहां पुराने विकासशील देशों ने अपनी प्रणालियों एवं प्रक्रियाओं का विकास धीरे-धीरे किया था वहीं संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाएं देर से आने वालों को मिलने वाले लाभ ले सके तथा विभिन्न संरचना विकल्पों में से एक का चुनाव करने तथा अन्य देशों के अनुभव से शिक्षा ग्रहण करने में समर्थ रहे। इन देशों को आधुनिकतम संरचना अंगीकार करने का विकल्प मिला (महादेव और स्टर्न, 2000) । इन अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक स्वच्छ पट्टी से अपना कार्य शुरू करने में समर्थ हुए तथा विकसित देशों में उपलब्ध प्रणालियों का सफल आरोपण कर सके। जबकि दूसरी ओर पुराने विकासशील देशों को अपनी वर्तमान प्रणाली के अनुरूप संरचना की आवश्यकता पड़ी। नाचने (2005) सावधान करते हैं कि विकसित देशों से उधार लेकर प्रतिमानों का सीधा-सीधा आरोपण इन देशों के हितों के विपरीत हो सकता है।

3.14 जिन अर्थव्यवस्थाओं में वे विद्यमान हैं तथा उनसे की गई मांगों की अनुक्रिया के अनुरूप केंद्रीय बैंकों का विकास हुआ। परिस्थितियों में बदलाव के साथ-साथ उनकी भूमिकाओं का विस्तार हुआ तथा केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धांतों का विकास हुआ। जब वर्तमान विकसित देशों के विकास की प्रक्रिया जारी थी तब मुक्त बाज़ार सिद्धांतों का आधिपत्य था एवं उन सिद्धांतों के अनुरूप उनके बाज़ार एवं संस्थाओं का विकास हुआ। ज्यों-ज्यों वित्तीय बाज़ार जटिलतर होते गए एवं प्रणाली का विस्तार हुआ तदनुरूप अपनी प्रणाली में संशोधन करने की पर्याप्त क्षमता उनमें थी।

3.15 इसके विपरीत अविकसित बाज़ारों की बाध्यता से विवश रहते हुए भी विकास प्रक्रिया को सघन बनाने का कठिन कार्य करने की, जिम्मेदारी विकासशील देशों पर आई। वर्तमान विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों के समक्ष उत्पन्न ''बाध्यता इष्टतमीकरण समस्या'' ज्यादा कठिन है तथा वे प्राचेतस उपायों द्वारा इन बंधनों को ढीला करने का प्रयास कर रहे है। विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों को पिछले एवं खंडित बाज़ारों की समस्या से जूझना पड़ा तथा प्रायः बाज़ार असफलता एवं वित्तीय दमन का सामना करना पड़ा। इसके लिए इन केंद्रीय बैंकों को दो अलग-अलग स्तरों पर कार्यवाही करनी पड़ी। इनकी मुद्रा नीति का संचालन प्रत्यक्ष अथवा क्षेत्रीय उपकरणों की सहायता से किया जाता था। साथ ही अपने बाज़ारों के विकास के लिए निरंतर प्रयास करने की आवश्यकता थी। बाज़ारों के पर्याप्त विकास के बाद ही वे बाज़ार आधारित उपकरणों का प्रयोग करने की स्थिति में आए। विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों को स्वायत्तता अभाव से उत्पन्न होने वाली अनेक बाध्यताओं जैसे मुद्रानीति पर राजकोष नीति की प्रधानता का सामना करना पड़ा। उनकी भूमिका प्रायः एक फ़ैसिलिटेटर की रही है जो वित्तीय क्षेत्र के विकास को प्रोत्साहन देता है तथा इससे उनके वर्तमान संरचना एवं कार्यों का विकास हुआ। ''प्रत्येक केंद्रीय बैंक के जन्म के अलग-अलग ऐतिहासिक कारण रहे हैं'' तथा इन्होंने ''न सिर्फ केंद्रीय बैंकों के वर्तमान कार्यों पर प्रभाव डाला बल्कि उनकी परिचालन विधियों को भी प्रभावित किया'' (जाधव, 2003)। अतः केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धांत जैसी कोई वस्तु नहीं है; इसमें अधिकांश का विकास उनके परिचालन के दौरान हुआ। दूसरे शब्दों में, केंद्रीय बैंकिंग के व्यवहारों एवं सिद्धांतों का संगामी विकास हुआ।

II. एक केंद्रीय बैंक के कार्य :

3.16 समय के साथ, विशेष जब अर्थव्यवस्थाएं संकटों या कठिनाइयों के दौर से गुजर रही थीं, केंद्रीय बैंक कार्यों का विकास हुआ। जिस अर्थव्यवस्था में बैंक स्थित है उसके आर्थिक विकास स्तर, इसको प्रदत्त आदेश की प्रकृति एवं परिचालन स्वायत्तता के कारण इन कार्यों में विविधता आती है। केंद्रीय बैंक के कार्यों को चार प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है - मौद्रिक नीति संबंधित कार्य, बैंकों का बैंक, सरकार का बैंक एवं विकास संबंधी कार्य। नोट निर्गम, मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य का रखरखाव मौद्रिक नीति के प्रमुख उद्देश्य बने। बाद में वृद्धि को प्रोत्साहन देने का कार्य भी इसमें जो सौंपा गया। यह कार्य सम्मुचय मौद्रिक नीति कार्य बने। बाद में, वित्तीय क्षेत्र के विकास के साथ-साथ बैंक की अंतिम ऋणदाता भूमिका अधिक महत्वपूर्ण बनी एवं इसने नियामक एवं पर्यवेक्षी भूमिका को अपने अंदर समाहित कर लिया। हाल के वर्षों में इसने वित्तीय स्थिरता के वृहत्तर लक्ष्य को अपनाया तथा बैंकिंग में प्रौद्योगिकी के क्रियान्वयन संबंधी उद्देश्य भी इसमें शामिल हैं। अधिकांश केंद्रीय बैंकों की स्थापना अपनी सरकारों की गतिविधियों के वित्तपोषण के लिए हुई। इस कार्य की समीक्षा की गई है तथा हाल के वर्षों में कई केंद्रीय बैंकों ने अपनी सरकारों को उधार देना बंद कर दिया है। बाज़ार, संस्थाओं एवं संप्रेषण नीतियों के विकास हेतु केंद्रीय बैंकों ने कई नए कार्य अंगीकार किए हैं।

मौद्रिक नीति कार्य

3.17 मौद्रिक नीति कार्य केंद्रीय बैंकिंग परिचालन के केंद्र में स्थित हैं तथा लगभग सभी केंद्रीय बैंकों का प्रमुख कार्य है। इनमें से, केंद्रीय बैंकिंग के शुरुआती दौर में, मुद्रा प्रबंध एवं मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य की रक्षा केंद्रीय बैंकों के लिए अत्यंत महत्व के थे। मूल्य स्थायित्व का स्पष्ट महत्व का उदगम बाद में हुआ हालांकि बाह्य मूल्य की रक्षा एवं स्वर्ण मानक से संबद्धता का निहित तात्पर्य मूल्य स्थायित्व ही था।

करेंसी इश्यू और प्रबंध

3.18 अधिकांश देशों में मुद्रा प्रबंध केंद्रीय बैंकों के सबसे महत्वपूर्ण पारंपारिक कार्यों में से एक है। केंद्रीय बैंकों का विकास होने से पहले निजी बैंक अपनी स्वयं की मुद्रा जारी करते थे तथा प्रायः भिन्न-भिन्न मान्यता / स्वीकार्यता वाली अनेक मुद्राएं प्रचलित थीं। मुद्रा निर्गम में राष्ट्रव्यापी समरूपता लाने एवं विनिमय की सुगमता सुनिश्चित करने हेतु मुद्रा निर्गम का कार्य केंद्रीय बैंक को सौंपा गया। वर्षों से केंद्रीय बैंक यह कार्य संपन्न करते रहे हैं। कई देशों में मुद्रा निर्गम का राष्ट्रीकरण किया गया। इस भूमिका का विस्तार हुआ है तथा आजकल मुद्रा की मांग का पूर्वानुमान, मुद्रा डिजाइन, छपाई, भंडारण, वितरण एवं बेकार नोटों का नाश आदि कार्यों का इसमें समावेश हुआ है।

3.19 उदाहरणार्थ, बैंक आफ इग्लैंड सन् 1694 से नोटों का निर्गम करता रहा है। प्रारंभ मे ये नोट हस्तलिखित होते थे। हालांकि सन 1725 से नोटों को अंशतः छापना शुरू किया गया परंतु प्रत्येक नोट पर रोकड़िये के हस्ताक्षर एवं उसको किसी के प्रतिदेय बनाना आवश्यक था। पूर्णतः मुद्रित नोट सन् 1855 में प्रचलन में आए। बैंक डे फ्रांस को सन् 1803 में शुरू-शुरू में सिर्फ पेरिस में नोट निर्गम का अनन्य प्राधिकार दिया गया परंतु सन् 1848 में यह प्राधिकार समग्र फ्रांस में लागू किया गया। बैंकों डे पुर्तगाल सन् 1887 में राजकीय बैंक बना एवं उसे 1891 में सारे पुर्तगाल में नोट निर्गम का प्राधिकार दिया गया। जर्मनी में केंद्रीय बैंक की स्थापना के कारणों में एक समान मुद्रा का प्रचलन सुनिश्चित करना भी शामिल था। इसी प्रकार बैंक आफ इटली को इटली की मुद्रा का आधार सुदृढ़ करने की जिम्मेदारी सौंपी गई। अमरीका में क्रांति के पहले एवं बाद में ब्रिटेन, स्पेन एवं इटली की मुद्राओं का चलन था। सन् 1789 में फर्स्ट बैंक आफ युनाइटेड स्टेटस को कागजी मुद्रा जारी करने का प्राधिकार दिया गया। सन् 1792 में अमेरिकी टकसाल की स्थापना की गई। सभी चार्टर्ड बैंक मुद्रा जारी कर सकते थे तथा सन् 1836 में 1600 बैंकों द्वारा 30,000 प्रकार की मुद्राएं जारी की जाती थीं। अमरीकी कोष ने सन् 1862 में हरित पृष्ठ (ग्रीन बैकस्) जारी किए। फ़ेडरल रिज़र्व एक्ट के प्रावधानों के अंतर्गत, सन 1913 में फ़ेडरल रिज़र्व को नोट मुद्रण का कार्य सौंपा गया। वास्तव में दुनिया में कुछ ही ऐसे केंद्रीय बैंक हैं जो नोट मुद्रण का कार्य नहीं करते हैं। सिंगापुर मौद्रिक प्राधिकारी (एमएएस) इसका एक प्रमुख उदाहरण है।

3.20 मुद्रा निर्गम की अनन्य शक्ति एक केंद्रीय बैंक को अंशतः या पूर्णतया दी जा सकती है, इससे संबंधित व्यवहार किसी सिद्धांत की अपेक्षा परंपरा से ज्यादा शासित होता है। यह सुविख्यात है कि विनिमय सुविधा हेतु मुद्रा की मूल अवधारणा विकसित हुई। प्रागैतिहासिक मुद्रा नोट वास्तव में उसके धारक को मूल मूल्यवान धातु लौटाने का वचनपत्र था। जैसे - इन वचनों पत्रों की स्वीकार्यता बढ़ी, इन नोटों का चलन सारे देश में होने लगा तथा जल्दी ही जारी कर्त्ता बैंक को ज्ञान हो गया कि वे अपने स्वर्ण भंडार से ज्यादा मूल्य की रसीदें जारी कर सकते थे। इससे आंशिक आरक्षी प्रणाली का विकास हुआ। इससे बार -बार बैंकों के असफल होने की घटनाएं बढ़ीं तथा अंतिम ऋणदाता के रूप में एक स्वतंत्र प्राधिकारी की आवश्यकता उभर कर सामने आई। केंद्रीय बैंकों के विकास के बाद भी सिक्कों एवं नोटों के आधारभूत आस्तियों के परिमाण का फैसला संबंधित सरकारों द्वारा किया जाता था। स्वर्ण मुद्रा, बुलियन; विदेशी मुद्रा भंडार एवं विदेशी आस्तियां आदि आस्ति आधार में शामिल किए जाते हैं आंशिक रिज़र्व प्रणाली के प्रादुर्भाव के कारण यह आस्ति आधार (स्वर्ण, मुद्रा आस्तियां आदि) घट कर कुल प्रचलित मुद्रा का एक अंश भर रह गया है।

3.21 विकासशील अर्थव्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में मुद्रा प्रबंध विभिन्न रूप धारण करता है। अधिकांश विकसित देशों में अधिक सामाजिक समानता के कारण मुद्रा आवश्यकता का एक समान पैटर्न होता है जिससे सुचारु मुद्रा प्रबंध में सहायता मिलती है। इसके विपरीत विकासशील देशों में भिन्न क्षेत्रों में विद्यमान सामाजिक आर्थिक विकास की अधिक विषमता से जनता में एकदम अलग मुद्रा अधिमान का जन्म होता है। इस विविधता के कारण केंद्रीय बैंकों के मुद्रा प्रबंध कार्य की जटिलता बढ़ती है एवं उसमें अधिक गत्यात्मकता की आवश्यकता पड़ती है। प्रचलन में गंदे नोटों की उपस्थिति, नकदी आधारित लेनदेन की प्रधानता एवं निम्न स्वचालन स्तर से विकासशील देशों में दक्ष मुद्रा प्रबंध में आनेवाली कठिनाईयों में कई गुना वृद्धि हुई है। हालांकि हाल ही के वर्षों में विकसित प्रौद्योगिकी से मुद्रा प्रबंध में सुधार हुआ है (उदेशी, 2004)।

मुद्रा के आंतरिक मूल्य का संरक्षण

3.22 विनिमय माध्यम की स्थापना केंद्रीय बैंकों को सौंपी गई सबसे पुरानी जिम्मेदारियों में से एक है। इस मूल उत्तरदायित्व से कालांतर में मुद्रा के विनिमय मूल्य की रक्षा के लिए मुद्रास्फीति दर को कम रखने के

मुद्रा नीति कर्त्तव्य का जन्म हुआ। जैसा कि मुद्रास्फीति टारगेटिंग संरचना के व्यापक प्रचलन से देखा जा सकता है, यह कार्य आधुनिक केंद्रीय बैंकों के लिए आज भी बहुत प्रासंगिक है। मूल्य स्थायित्व की प्राप्ति एवं संरक्षण में कई सुस्पष्ट चरण आए। महान मंदी से पहले धातुवाह प्रवाह ने अर्थव्यवस्था को स्वचालन तरीके से चलाया। बीसवीं सदी में स्वर्ण मानक मुद्रा के स्थान पर शनै: शनै: कागजी मुद्रा के आरोपण से मुद्रानीति लक्ष्यों का पुनर्निधारण हुआ एवं मूल्य स्थिरता के लिए अलग से प्रयास करने की आवश्यकता पड़ी। स्वर्ण मानक के त्याग से मुद्रा के आंतरिक मूल्य (क्रय शक्ति) एवं बाहय मूल्य (विनिमय दर) संरक्षण के स्वचालित तंत्र का लोप हुआ। मुद्रा का आंतरिक मूल्य संरक्षण एवं बाह्य मूल्य संरक्षण दो अलग-अलग पहलू बन गए। यह विलगन इस अर्थ में लाभकारी या कि इससे राष्ट्रों को अपनी अलग नीतियाँ अपनाने की स्वतंत्रता मिली। परंतु स्वर्ण मानक के त्याग एवं आंशिक रिज़र्व प्रणाली के अंगीकार से मूल्य स्थायित्व का खतरा बढ़ा।

3.23 महान मंदी केंद्रीय बैंकों के इतिहास में कठिनतम दौर था। इस दौर में विश्व के सभी देशों की मुद्रा की सामान्य कीमत में एक चौथाई कमी आई। उत्पादन एवं रोजगार में भारी गिरावट आई जिससे सर्वत्र कठिनाइयां पैदा हुईं। इस पृष्ठभूमि में, सामान्य सिद्धांत में, केंस (1936) राजकोषीय नीति की भूमिका पर बल दिया। परंतु बाद में फ्रीडमैन एवं श्वार्ज (1963) ने उल्लेख किया कि महान मंदी से पहले मुद्रा प्रसार में वास्तविक कमी आई। उन्होने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि 1930 के दशक की महान मंदी सिद्धांततः मुद्रा नीति की असफलता का परिणाम नहीं थी बल्कि मुद्रा आपूर्ति में कमी इसका कारण थी - जो केंद्रीय बैंकों की संकुचनकारी कार्यवाही का प्रभाव थी। बैंक असफलताओं की लहर ने इस समस्या को और जटिल बनाया। अतः महान मंदी को मौद्रिक नीति की सीमा का प्रमाण नहीं माना गया बल्कि इसे मौद्रिक नीति निर्माताओं की सीमित दूर दृष्टि एवं कार्यवाही का परिणाम समझा गया। ऐसे दौर में, जब व्यय ही शायद मांग में कमी से उत्पन्न समस्या का एक मात्र उपाय था, अधिकांश सरकारों एवं केंद्रीय बैंकों ने लोगों को अपने खर्चे घटाने की अनुचित सलाह दी।

3.24 इसी बीच, महान मंदी एवं केंस के सामान्य सिद्धांत द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका के कारण परिदृश्य में अप्रतिसंहरणीय बदलाव आया एवं निर्बाधता से जोर हटा कर हस्तक्षेप एवं राजकीय विवेकाधिकार पर केंद्रित किया गया। केंस के अध्ययन ने अर्थनीति के राजकोषीय पहलुओं पर दृष्टि केंद्रित की। केंस (1936) ने अपनी सामान्य थ्योरी में मूल्य स्थिरता के मुद्दों पर प्रकाश नहीं डाला जैसा कि उसने द ट्रीटाइज़ (केंस, 1930) में किया था, जिसमें उसने मूल्य स्तर टारगेटिंग की वकालत की। वास्तव में केंस के माडल में सैद्धान्तिक कमजोरी थी जिसको बाद में फिलिप्स कर्व को सम्मिलित कर दूर किया गया। फिलिप्स कर्व की यह मान्यता कि 'अतिरिक्त वृद्धि के लिए मुद्रास्फीति को सहन किया जा सकता है'ज्यादा दिन नहीं टिकी। कुछ विपरीत प्रमाणों ने यह साबित किया कि ऊंची मुद्रास्फीति दर वृद्धि के लिए घातक होती है (बर्रो, 1995; सरेल, 1996)..। तथापि कुछ समय तक फिलिप्स कर्व महत्वपूर्ण बनी रही (फिशर; 2005)।

3.25 मूल्य स्थायित्व लक्ष्य लंबे समय तक आंतरिक नीति के केंद्र बिंदु बने रहे और आज भी वे केंद्रीय बैंकों का मुख्य सरोकार हैं। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों का एक अतिरिक्त कार्य रहा है क्योंकि सरकारें उनसे यह अपेक्षा रखती थी कि वे तीव्रतर विकास के लिए जरुरी संसाधन जुटाने के लिए सिक्का- ढलाई लाभ का प्रयोग करें। केंद्रीय बैंकों के कार्यों में प्राय विरोधाभास होता है, उदाहरणार्थ इसकी मुद्रा के मूल्य-संरक्षण भूमिका का इसकी सरकार का बैंक होने की भूमिका से, विशेषकर विकासशील देशों में, टकराव होता है। ये केंद्रीय बैंक बहुत भारी सार्वजनिक ऋण का प्रबंध करते हैं तथा प्राय: मुद्रास्फीति कर का प्रयोग करते हैं जो उनके मूल्य-स्थायीकरण प्रयासों को हानि पहुँचाता है। राजकोष एवं मुद्रा नीति निर्माताओं की नीतियों में संगतता सुनिश्चितता करने हेतु उनके आपसी विचार-विमर्श की आवश्यकता को विकसित देशों में लक्षित किया गया। इसके विपरीत विकासशील देशों में ऐसे वार्तालाप की कमी थी तथा केंद्रीय बैंक ऋण प्रबंधक के तौर पर सार्वजनिक ऋण के प्रबंध हेतु ब्याज दरों को कृत्रिम रूप से कम रखते थे। इसके बाद अन्य अधिक सख्त उपायों, जिसमें प्रत्यक्ष उपकरणों जैसे आरक्षी आवश्यकताओं एवं चयनित ऋण नियंत्रण, द्वारा मुद्रास्फीति को नियंत्रित किया जाता था जिससे वित्तीय दमन होता था।

3.26 विकासशील देशों में विशिष्ट तौर पर केंद्रीय बैंकों पर यह उत्तरदायित्व होता है कि वे सरकार के बड़े उधार कार्यक्रमों की सफलता सुनिश्चित करें। इसके लिए वे बैंकिंग प्रणाली पर उच्च आरक्षी आवश्यकताएं लागू करते थे ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे आबद्ध क्रेता बने रहेंगे। भले ही उधारों पर बाज़ार से कम ब्याज मिले। विकास के कुछ प्रारंभिक स्तर को प्राप्त करने के बाद ये केंद्रीय बैंक यह सुनिश्चित करें कि सरकार के उधार कार्यक्रमों की बैंकिंग क्षेत्र पर निर्भरता घटे। इस दिशा में अनेक कदम यथा, सरकारी प्रतिभूतियों की ब्याज दर का उन्मुक्त बाज़ार द्वारा निर्धारण तथा मौद्रिकनीति की बाज़ार आधारित प्रक्रियाएं, उठाने की आवश्यकता पड़ती है।

3.27 सांकेतिक एंकर का निर्णय करके मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य को सुरक्षित किया जाता है। एक सांकेतिक एंकर या एक अंतरिम मौद्रिक नीति लक्ष्य का चयन एक महत्वपूर्ण मामला है। 1970 के दशक के अंत एवं 1980 दशक में मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण के प्रति सामान्य

रुझान रहा। उसके बाद एक मुद्रास्फीति बेधन सरंचना को अंगीकार करने की और वर्द्धमान प्रवृत्ति रही। केंस ने 1930 के दशक में मूल्य स्तर बेधन का समर्थन किया (केंस 1930)। स्वर्ण मानक व्यवस्था की समाप्ति के बाद स्वीडन ने सबसे पहले इसे अपनाया। तो भी मौद्रिक नीति की एक महत्वपूर्ण संरचना बनने में इसे पांच दशक से ज्यादा समय लग गया।

3.28 मुद्रास्फीति दर को कम रखने के लिए केंद्रीय बैंकों ने आर्थिक माध्यमों की प्रत्याशा को स्थिर रखने हेतु प्राय: बहुत प्रयास किए हैं। इसके लिए मुद्रास्फीति की प्रक्रिया को समझना अत्यावश्यक है। केंद्रीय बैंक को चाहिए कि वह अग्रणी संकेतकों का प्रयोग करके प्राचेतस् तरीके से मुद्रास्फीति का पूर्वानुमान लगाए ताकि इससे उन्हें प्रतिक्रिया के लिए ज्यादा समय मिल सके। आवश्यक अग्रिम कार्यवाही का परिमाण संप्रेषण अंतराल की लंबाई, जो भिन्न-भिन्न देशों में अलग-अलग होती है तथा एक देश में विभिन्न कालों में भिन्न-भिन्न हो सकती है, पर निर्भर करता है। मूल्य समायोजन अंतराल एवं प्रत्याशा अंतराल मूल्य स्तर के दो निर्धारक है । मूल्य समायोजन अंतराल की गणना के लिए उद्योग जगत में क्षमता उपयोग के स्तर, स्टाक का स्तर, उत्पादन कारकों की आपूर्ति तथा मजदूरी एवं कीमतों की नम्यता की जानकारी आवश्यक है। इसके विपरीत प्रत्याशा अंतराल उत्पाद एवं कारक मूल्य प्रत्याशा, अर्थव्यवस्था में मजदूरी करारों की प्रकृति, केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता तथा उसके मुद्रास्फीति संबंधी इतिहास पर निर्भर करता है। यदि केंद्रीय बैंक का इतिहास विश्वासजनक है तो वह मुद्रास्फीति प्रत्याशा के स्थिरीकरण में सफल हो सकता है। प्रणाली के अंतर्निहित स्थायित्व के बारे में राय तथा अभिकल्पित मुद्रास्फीति प्रक्रिया की प्रकृति से केंद्रीय बैंक की भूमिका निर्धारित होती है। मौद्रिक नीति के समर्थकों का यह विश्वास है कि हालांकि प्रणाली आंतरिक तौर पर स्थायी है परंतु इसमें लंबे, परिवर्तनीय एवं अप्रत्याशित अंतराल हैं। इसके कारण चक्रीय आवर्तन के मंदन की बजाय एम्पलीफिकेशन होता है। मौद्रिक नीति के समर्थकेतर यह विश्वास करते हैं कि चूंकि समायोजन प्रक्रिया में बहुत अधिक समय लगता है अतः केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप की आवश्यकता बढ़ जाती है (हम्फ्री 1986)

3.29 समय बीतने के साथ इस धारणा को बल मिलता है कि अधिक नोट छापने या ''अर्थव्यवस्था की पंप प्राइमिंग'' से वृद्धि दर में बढ़ोत्तरी नहीं होती। वास्तव में स्थिर मूल्य स्तर विकास एवं व्यापार की आवश्यक पूर्व शर्त बन गया है। तदनुसार मौद्रिक नीति के परिचालन द्वारा मूल्य स्थिरता का अनुरक्षण केंद्रीय बैंकों का प्रधान लक्ष्य बन गया है। हालांकि मुद्रास्फीति पर केंद्रीय बैंक का सीधा नियंत्रण नहीं होता तथापि वह अपने नियंत्रणाधीन अंतरिम कारकों के प्रयोग द्वारा मूल्य स्थिरता सुनिश्चित कर सकता है। बाज़ार अर्थव्यवस्था में केंद्रीय बैंक के पास मौद्रिक नीति के परिचालन के लिए बाज़ार आधारित उपकरण उपलब्ध हो सकते हैं। यह अंतरिम लक्ष्यों जैसे ब्याज दरों, विनिमय दरों एवं मौद्रिक सामग्री का चुनाव कर सकता है या अधिक बहुस्रोत पद्धति अपना कर उत्पादन एवं कीमतों ने परिवर्तन की पूर्वघोषणा करने में सक्षम अनेक संकेतकों पर विचार कर सकता है। परंतु 1990 के दशक में मूल्य स्थिरता के प्रति अपनी निष्ठा की घोषणा करते हुए अधिकांश देश मुद्रास्फीति बेधन की ओर बढ़े हैं। मौद्रिक नीति की सफलता के लिए मुद्रा मांग की स्थिरता या न्यूनतम उसकी पूर्वानुमानता आवश्यक शर्त है। 1980 के दशक में अनेक केंद्रीय बैंकों ने इस अंतरिम लक्ष्य को त्याग दिया क्योंकि मुद्रा मांग समीकरण अस्थिर, संभवतया तीव्र गति वित्तीय नवीकरण से, हो गया। परंतु कुछ केंद्रीय बैंकों यथा जर्मनी, ने पाया कि मुद्रा मांग स्थिर बनी हुई है तथा उन्होंने अनेक वर्षों तक मौद्रिक लक्ष्यों का प्रयोग जारी रखा। विभिन्न प्रकार की 94 विकासशील, संक्रमणशील एवं औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं के मौद्रिक सर्वेक्षण में आधे से ज्यादा उत्तरदाताओं ने मुद्रास्फीति में कमी या निम्न मुद्रास्फीति दर के अनुरक्षण के दीर्घावधि लक्ष्यों को महत्वपूर्ण माना तथा केंद्रीय बैंक के लिए इसे अन्य किसी भी औपचारिक या अनौपचारिक लक्ष्य से ज्यादा महत्वपूर्ण बताया (फ्राइ एवं अन्य, 2000)।

3.30 मुद्रास्फीति टारगेटिंग संरचना में केंद्रीय बैंक एक निश्चित अवधि में सार्वजनिक रूप से पूर्व घोषित आंकिक मुद्रास्फीति लक्ष्य की प्राप्ति मुद्रानीति परिचालन का एक स्पष्ट वचन देता है। कुछ देशों ने बिंदु लक्ष्य अंगीकार किए हैं तथा अन्य ने और नम्य दृष्टिकोण अपनाते हुए एक बेंड के अंतर्गत मुद्रास्फीति लक्ष्य रखते हैं। न्यूजीलैंड, कनाडा, दि युनाईटेड किंगडम, फिनलैंड, इजराईल, स्पेन एवं स्वीडन मुद्रास्फीति बेधन को अपनाने वाले पहले देश थे। विशिष्ट मुद्रास्फीति लक्ष्य से नीति को आंतरिक स्थिरण मिलता है मुद्रा नीति के परिचालन में विश्वास पैदा होता है। स्पष्ट लक्ष्यों के निर्धारण से उत्तरदायित्व को प्रोत्साहन मिलता है एवं इससे केंद्रीय बैंकों को लक्ष्य के निकट आने की संभावनाएं बढ़ती हैं। मुद्रा स्फीति लक्ष्य निर्धारण से मध्यावधि मुद्रास्फीति दृष्टिकोण का सुस्पष्ट मार्ग निर्धारण किया जा सकता है जिससे मुद्रास्फीति के झटकों एवं संबंधित लागतों / नुकसान को कम किया जा सकता है। चूंकि दीर्घावधि ब्याज दरों में मुद्रास्फीति प्रत्याशा में होने वाली घटबढ़ के अनुरूप परिवर्तन होता है, अतः निम्न मुद्रास्फीति दर का लक्ष्य रखने से अधिक स्थायी एवं निम्न ब्याज दरें सुनिश्चित की जा सकती हैं।

3.31 केंद्रीय बैंक के चार्टरों एवं अधिकारिक वक्तव्यों में, विशिष्टतया, मूल्य स्थिरता का मौद्रिक नीति के एक लक्ष्य के रूप में

वर्णन किया जाता है। मुद्रास्फीति लक्ष्य सुनिश्चित करने एवं मूल्य स्थिरता के लक्ष्यो मे , 1996) । परंतु केंद्रीय बैंकों की मुद्रास्फीति विरोधी नीतियों के परिचालन में अंतर है। कई केंद्रीय बैंकों उदाहरणार्थ बैंक आफ कनाडा, बैंक आफ इग्लैंड एवं रिज़र्व बैंक आफ न्यूजीलैण्ड ने स्पष्ट मुद्रास्फीति लक्ष्य को हाल में अपनाया। अन्य, जिनकी मुद्रास्फीति नियंत्रण संबंधी विश्वसनीयता सुप्रतिष्ठित है, (उदाहरण हेतु पूर्व इसीबी बुंडेस बैंक एवं स्विस नेशनल बैंक, स्पष्ट मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारित नहीं करते)।

3.32 मुद्रास्फीति टारगेटिंग नीति लागू करने से पहले किसी भी देश को कतिपय पूर्व शर्तों का पालन करना आवश्यक होता है। इनमें सर्वप्रमुख है - केंद्रीय बैंक पर सरकार के बजट के वित्त पोषण की बाध्यता न हो, उसके पास बाज़ार द्वारा निर्धारित प्रभावी मौद्रिक नीति उपकरण उपलब्ध हों, उसका व्यवहार पारदर्शी हो तथा वह मुद्रास्फीति प्रत्याशा का पूर्वानुमान लगाने में समर्थ हो एवं मुद्रास्फीति पर मौद्रिक नीति के प्रभावों का आकलन करने की स्थिति में हो। मुद्रास्फीति लक्ष्य नीति अपनाने वाले देश को प्रासंगिक मूल्य इंडेक्स, जिसको लक्षित किया जाना है, का चुनाव करना पड़ता है। कुछ देशों ने इस उद्देश्य के लिए उपभोक्ता मूल्य इंडेक्स (सीपीआइ) को चुना है। विकल्प के तौर पर वे कोर मुद्रास्फीति को लक्षित कर सकते हैं। विकासशील देशों में सामान्यतः मुद्रास्फीति की उंची दर होती है। इन देशों में भविष्य की मुद्रास्फीति का पूर्वानुमान अनिश्चितता भरा होता है। अतः विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में मुद्रास्फीति लक्ष्य की प्राप्ति में ज्यादा चूक होने की संभावना रहती है। इसके अलावा सरकार के राजकोष घाटे के वित्तपोषण की आवश्यकता से कई देशों में केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता सीमित होती है ।

3.33 समय के साथ केंद्रीय बैंकों ने अपने उपकरणों को और धारदार बनाया है। चूंकि मौद्रिक नीति का परिचालन सर्वदा उत्पादन एवं कीमतों से संबंधित प्रतिफलों के पूर्वानुमान के आधार पर किया जाता है अतः केंद्रीय बैंकर के लिए इनकी पूर्वगणना अत्यावश्यक होती है। ये पूर्वगणनाएं विभिन्न प्रकार के माडलों के आधार पर की जाती हैं। अपने नीति निर्णयों में सुविधा के लिए कुछ केंद्रीय बैंक अपने अंतरिम लक्ष्यों जैसे मुद्रा वृद्धि या विनिमय दर की पूर्वगणना के लिए विशिष्ट उपकरणों या माडलों का प्रयोग करते हैं।

3.34 वित्तीय नवीकरणों एवं प्रौद्योगिकीय विकास के कारण केंद्रीय बैंकों के लिए यह आवश्यक हो गया कि वे मुद्रा की परिभाषाओं में निरंतर परिष्कार करें। विभिन्न वित्तीय उत्पादों द्वारा वाणिज्यिक बैंक जमा मुद्रा, प्लास्टिक मुद्रा तथा ई नकदी और ई मुद्रा का सृजन करते हैं। ग्राहकों द्वारा इलेक्ट्रोनिक रूप कार्ड पर धारित मुद्रा मूल्य इकाइयों को ई मुद्रा कहते है। चूंकि ई-मुद्रा में सामान्य प्रारूप वाली मुद्रा के सभी गुण होते हैं अतः यह चेक या डिमांड ड्राफ्ट जैसी लिखतों की तरह मुद्रा अंकित लेन देन को सुगम बनाता है। इससे मुद्रा प्रबंध एवं मूल्य स्थिरीकरण का कार्य उत्तरोत्तर कठिन हो गया है। बैंकों द्वारा यह कार्य प्रदत्त पूर्वानुमानित आय एवं ब्याज दर परिवर्तनों के आधार पर मुद्रा मांग के सक्रिय पूर्वानुमान द्वारा किया जाता है। इन समीकरणों में समय के साथ बदलाव आता है तथा वित्तीय क्षेत्र में तीव्रगति परिवर्तनों के दौर से गुजर रहे देशों में कभी-कभी ये संबंध अस्थिर हो जाते हैं जिससे केंद्रीय बैंकों की समस्याओं में वृद्धि होती है।

मुद्रा के बाह्य मूल्य का अनुरक्षण

3.35 कई अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक विनिमय दर प्रबंध को बहुत महत्वपूर्ण मानते हैं। पारंपरिक केंद्रीय बैंकों के लिए सत्रहवीं सदी में भी विनिमय दर प्रबंध बहुत महत्व रखता था। स्वर्ण मानक के प्रचलन काल में धातुवाह प्रवाह के माध्यम से लगभग स्वचालित तरीके से विनिमय दर का निर्धारण होता था। इससे यह सुनिश्चित होता था कि आरक्षित स्वर्ण भंडार में वृद्धि एवं कटौती के साथ-साथ विनिमय में क्रमशः वृद्धि एवं कमी आती थी। स्वर्ण भंडार एवं उसमें घटबढ़ आवश्यक रूप से उत्पादन वृद्धि में सहायक नहीं थे। सममूल्यता अनुरक्षण के लिए ही काफी प्रयास करने पड़ते थे। 'विनिमय दर का समुचित स्तर' एक विस्तृत चर्चा का विषय है। तथाकथित बाजार निर्धारित स्तर भी एक ऐसा स्तर हो सकता है जिससे क्रय शक्ति समानता की पुष्टि हो सकती है या नहीं भी हो सकती। क्रय शक्ति समानता का सिद्धान्त यह घोषणा करता है कि यदि मूल्यों की गणना एक ही मुद्रा में की जाए तो इससे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वस्तुओं के मूल्य में समानता आएगी। इसका कोई अनुभवजन्य आधार नहीं है क्योंकि वास्तविक विश्व में अनेक कारण विनिमय मुद्रा दर को प्रभावित करते हैं।

3.36 विनिमय दर प्रबंध में केंद्रीय बैंक की भूमिका को कम करके नहीं आंका जा सकता। समय के साथ केंद्रीय बैंकों द्वारा विनिमय दर प्रबंध की आधारभूत व्याख्या/कारणों में परिवर्तन हुआ है। मुद्रा के मर्केंटाइलिस्ट सिद्धान्त, जो आयात के मुकाबले निर्यात की अधिकता पर जोर देता है, से शुरू करके विनिमय प्रबंध के अनेक प्रतिमान हैं। कुछ केंद्रीय बैंक विनिमय दर को नीचा रखते है (निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए) तथा अन्य इसका बिंदु और बैंड लक्ष्य रखते हैं।

3.37 औपनिवेशिक शासन काल में अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक व्यवस्था का ध्यान व्यापार एवं निवेश पर केंद्रित था तथा विनिमय दर इस प्रकार निर्धारित की जाती थी ताकि औपनिवेशिक शक्तियों को लाभ मिले। सत्रहवीं एवं अठारहवी शताब्दियों में ब्रिटिश साम्राज्य का उदय एवं

विकास हुआ तथा उसके साथ बैंक आफ इग्लैंड का भी विकास हुआ। चूँकि पाउंड स्टर्लिंग सबसे मजबूत मुद्रा थी, अत: यह सर्वाधिक स्वीकार्य अंतरराष्ट्रीय मुद्रा बनी तथा अंशत स्वर्णाधारित होने के कारण प्रधान एंकर बनी रही । उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अधिकांश बैंक स्वर्ण मानक का पालन करते थे तथा वह विश्व की प्रथम नियत दर प्रणाली थी। इस प्रणाली में दो मुद्राओं की पारस्परिक विनिमय दर का निर्धारण उनके द्वारा खरीदे जा सकने वाले स्वर्ण भार के अनुपात से होता था। इस मुद्रा विनिमय प्रणाली के कारण मुद्रा प्रबंध विनिमय दर प्रबंध की स्वतंत्रता का लोप होता था। तथापि इससे देश की विश्वनीयता में भारी वृद्धि होती थी।

3.38 प्रथम विश्व युद्ध एवं उसके कारण हुए भारी रक्षा खर्चों के कारण स्वर्णमानक प्रणाली बर्बाद हो गई। मित्र राष्ट्रों द्वारा जर्मनी पर हानिपूर्ति हर्जाना लगाने से अंतरराष्ट्रीय विनिमय दर प्रणाली को और विकृत किया। युद्धोत्तर आर्थिक वृद्धि ने अधिकांश केंद्रीय बैंकों के लिए सघन मुद्रास्फीति की समस्या खड़ी कर दी। युद्धोत्तर काल में युद्ध पूर्व स्तर पर स्वर्णमानक प्रणाली को पुनर्जीवित करने के प्रयासों में बड़ी कठिनाई आई। यह चर्चा कि 'क्या यूनाईटेड किंगडम द्वारा स्वर्णमानक प्रणाली दोबारा लागू करना ही महान मंदी की शुरुआत का कारण था'अब भी अपूर्ण है। अपने निर्यात को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से कई प्राथमिक उत्पादों के उत्पादक राष्ट्रों ने 1929-30 वर्षों में अपनी मुद्राओं का अवमूल्यन किया। अपने पड़ोसी को भिखारी बनाओ के उद्देश्य से किए गए विनिमय दर अवमूल्यन प्रायः असफल रहे। यू के के स्वर्ण भंडार में भारी गिरावट आई तथा बैंक आफ इंग्लैण्ड विश्व का बैंकर की भूमिका निभाने की स्थिति में नहीं रहा। वास्तव में सन 1931 में उसे स्वर्णमानक का त्याग करना पड़ा । अमेरिकी फेड ने भी सन 1933 में ऐसा ही किया। इस काल में मौद्रिक नीति अत्यंत अनम्य बन गई। उत्पादन एवं रोजगार में कमी आई तथा कई देशों ने व्यापार बाधाएं खड़ी कीं।

3.39 द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के समय अमरीकी डालर सबसे मजबूत मुद्रा बनकर उभरा । ब्रेटनवुड सम्मेलन तथा उसके बाद स्थापित अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष की स्थापना के साथ डालर अधिकारिक तौर पर एक धुरी बन गया। स्थिर विनिमय दर का अनुरक्षण ब्रेटन वुड प्रणाली का एक प्रमुख उद्देश्य था। सममूल्य की एक प्रतिशत सीमा में विनिमय दर को बनाए रखना, सदस्यों की जिम्मेदारी थी। केवल अपने भुगतान संतुलन में मूलभूत असंतुलन की स्थिति में ही कोई सदस्य अपनी मुद्रा के मूल्य परिवर्तन का सुझाव दे सकता था। यद्यपि स्वर्ण अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष का कील बिंदु था परंतु अधिकांश राष्ट्रों ने अपनी मुद्राओं का मूल्य डालर के मूल्य के साथ जोड़ा, जो स्वय ंस्वर्ण आधारित था। डालर अंतरराष्ट्रीय विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप का माध्यम बना तथा देशों ने अपने विदेशी मुद्रा भंडार स्वर्ण के साथ डालर में रखने शुरू किए।

3.40 सन् 1967 में पौंड स्टर्लिंग के अवमूल्यन तक इस प्रणाली ने संतोषजनक तरीके से काम किया। कोष का पुनरुद्धार करने एवं वैश्विक द्रवता के प्रबंध हेतु अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने सन् 1967 में विशेष आहरण अधिकार (एसडीआर) का प्रचलन शुरू किया जिसके द्वारा अभावग्रस्त राष्ट्र अधिशेष धारक राष्ट्रों से दुर्लभमुद्रा उधार ले सकते थे। कालांतर में जब अधिकारिक स्वर्ण मूल्य प्रणाली के प्रति अमेरिका की निष्ठा के बारे में आशंका व्यक्त की जाने लगीं, जो बाद में सही साबित हुई जब अमेरिका ने डालर-स्वर्ण संबंध को सन् 1971 में समाप्त कर दिया, उसके बाद ब्रेटन वुड प्रणाली का पतन प्रारंभ हुआ।

3.41 अमेरिका द्वारा स्वर्ण परिवर्तनीयता के निलंबन के बाद दस राष्ट्रों के दल बीच स्मिसोनियन समझौता किया गया जो सिर्फ 14 महीने चला तथा जून 1972 में खत्म हो गया। इस करार में विनिमय दर की घटबढ़ के लिए नई केंद्रीय दरों के ऊपर और नीचे घटबढ़ की सीमा 2.25 प्रतिशत नियत की और यह आशा की गई की इससे अभावग्रस्त देशों के आरक्षी भंडार पर दबाव कम होगा। इस नई प्रणाली की स्थापना के बावजूद यू के के समक्ष भुगतान असंतुलन की समस्या आई तथा अन्त में उसने स्टर्लिंग की विनिमय दर को जून 1972 में मुक्त कर दिया। स्वीडन और जापान ने इंग्लैंड का अनुकरण किया तथा अंततः प्रमुख राष्ट्रों की बीच यह मौन सहमति बनी कि ब्रेटन वुड प्रणाली को समाप्त होने दिया जाए। तदनुसार, मार्च 1973 तक विश्व ने 'अप्रणाली'को अपनाया।

3.42 सन् 1977 में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के सदस्यों ने एक नई लचीली विनिमय दर प्रणाली की शुरुआत करने हेतु प्रयास किए। इस काल में मौद्रिक नीति पहलों का पुनरोदय भी हुआ। व्यापार-बाधाओं की सहायता से विनिमय दर एवं घरेलू ब्याज दर नियत करने की सामर्थ्य प्राप्त हुई। परंतु इससे प्रायः मुद्रास्फीति में वृद्धि हुई क्योंकि इससे विनिमय दर द्वारा नियत आभासी स्थिरक की हानि हुई। तदुपरांत अलग-अलग देशों ने मौद्रिक एवं विनिमय दर लक्ष्यों के रूप में आभासी स्थिरक विकसित करने के प्रयास किए। फ्रांसीसी फ्रेंक तथा इटालियन लीरा को डयूश मार्क या पाउंड स्टर्लिंग के साथ कील बंद किया गया जिससे उनकी मुद्रास्फीति विरोधी विश्वसनीयता में वृद्धि हुई। खराब मूलभूत संकेतकों के कारण इस उधार मिली विश्वसनीयता का अनुरक्षण करना कठिन था। 1990 के दशक के प्रारंभ में विनिमय दर तंत्र के विनाश से यह पुनर्प्रमाणित हुआ। इन देशों के अनुभव से यह स्पष्ट हुआ विनिमय दर के सख्त नियंत्रण की नीति अपने आप में

विश्वासजनक नहीं है। जब अर्थव्यवस्था में अपस्फीति का संकट आया तो प्रायः केंद्रीय बैंकों विनिमय दर पेग का त्याग कर दिया तथा ब्याज दरों में कटौती की।

3.43 यह सुविदित है कि नियत मुद्रा दर से आंतरिक मौद्रिक नीति पर बाध्यता आरोपित होती है। यदि इसके रुझान एवं स्थिरक देश की मौद्रिक नीति के रुझान में ज्यादा अंतर हो तो इससे आवंछनीय पूंजी अंतरप्रवाह या पूंजी पलायन को प्रोत्साहन मिलता है; जिसका केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप से आंशिक समाधान संभव है। 1997 का पूर्व एशिया का आर्थिक संकट हाल के वर्षों में मुद्रा मूल्य अनुरक्षण की असफलता की बड़ी घटना है। सामान्यतया नियत विनिमय दर एवं व्यापक पूंजी गतिशीलता का संयोग संकटग्रस्त राष्ट्रों का साझा गुण था। इससे ऐसे राष्ट्रों की कठिनाइयों पर भी ध्यान गया जिन्होंने अपने वित्तीय क्षेत्र में सुधार किए बिना अपने वित्तीय बाजारों को उन्मुक्त बनाया । यह ज्ञात हुआ कि नियत विनिमय दर, पूर्ण परिवर्तनीयता एवं स्वतंत्र मौद्रिक नीति का संयोग स्थिर नहीं हो सकता तथा इसे साहित्य में ''असंभव त्रिमूर्ति'' के नाम से जाना जाता है।

3.44 वास्तव में विनिमय दर की भारी सुरक्षा की जाती है तथा पूर्णनम्य विनिमय दर अब भी एक मृग मरीचिका ही बनी हुई है। यह देखा गया है कि अधिकांश केंद्रीय बैंक हस्तक्षेप करते हैं भले ही उनका उद्देश्य किसी विशेष विनिमय दर की रक्षा करना नहीं होता। काल्वो एवं रीनहाई (2000) ने विधिक एवं वास्तविक विनिमय दरों का अंतर स्पष्ट किया यह भी सिद्ध किया ऐसे कई राष्ट्र जो मुक्त विनिमय दर का दावा करते हैं वास्तव में अपने विनिमय दर को कीलित करते रहे हैं। वे राष्ट्र, जो मुक्त विनिमय दर प्रणाली का पालन करते, भी विदेशी मुद्रा बाजार में अस्थिरता कम करने के लिए भारी हस्तक्षेप करते हैं। लेवी-यय़ाति और स्टर्नेनेगर (2001) ने राष्ट्रों की औपचारिक रूप से कील बंदी की घोषणा से बचने की प्रवृत्ति को सिद्ध किया है। ये राष्ट्र हर समय कीलित मुद्रा दर की रक्षा किए बगैर स्थायी विनिमय दर का लाभ उठाने की स्थिति में होते हैं।

3.45 1990 के दशक के दौरान सुधारों ने अनेक अर्थव्यवस्थाओं का कायापलट करके उन्हे स्पंदनशील एवं मुक्त बनाया। उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विनिमय दर का मुक्त निश्चय निरंतर जटिल होता जा रहा है। विश्व बाजारों के समेकन के परिणामस्वरूप पूंजी प्रवाह की संभावना से समस्या और उलझ जाती है। इनमें से अनेक देशों में लाए गए संरचनात्मक परिवर्तनों से विनिमय दर नम्यता या विनिमय दर लक्ष्यों या लक्ष्य सीमा पर विचार करना संभव हुआ है। 1990 के दशक में विश्व के अनेक भागों में कई मुद्रा संकट आए।

3.46 एक मुद्रा के प्रति विश्वास में व्यापक कमी को मुद्रा संकट कहते हैं। सिद्धान्ततः मुद्रा संकट का तात्पर्य उस स्थिति से है जब बाजार सहभागियों की इस प्रत्याशा, कि कील बंदित मुद्रा की वर्तमान विनिमय दर का अनुरक्षण नहीं किया जा सकता, से सट्टा खरीद गतिविधियों को प्रोत्साहन मिलता है जिससे दबाव बढ़ता है तथा वे मुद्रा के अधिकारिक अवमूल्यन या पुनर्मूल्यन के लिए विवश करते हैं। मुद्रा संकट ऐसे देशों में भी पैदा हो सकता है जहां विनिमय दर नियत नहीं है परंतु निश्चित बड़ी सीमा में स्वतंत्रता पूर्वक घटबढ़ सकती है। अतः कई अध्ययन मुद्रा के आभासी या वास्तविक भारी अवमूल्यन की स्थिति को मुद्रा संकट मानते हैं। इस प्रकार मूल संकेतकों से सुमेल करने के लिए किया गया अवमूल्यन इस परिभाषा में नहीं आता। अस्थिर विनिमय दरें मुद्रा संकटों का लक्षण है । मुद्रा के भारी अवमूल्यन अवांछनीय हैं क्योंकि वे विदेशी मुद्रा जोखिम में वृद्धि के साथ विनिमय दर संकेतकों की सूचना अंतर्वस्तु में कमी लाते हैं तथा निवेश को हतोत्साहित करते है। केंद्रीय बैंक द्वारा मुद्रा संकट के निवारण की संभावना केंद्रीय बैंक के पिछले कार्य निष्पादन रिकार्ड, जिससे उसकी विश्वसनीयता निर्धारित होती है, तथा संकटमोचन क्षमता पर आधारित होती है। मुद्रा संकट छूत द्वारा भी पैदा हो सकता है। आगामी संकट के पूर्वगामी संकेतों की पहचान के लिए केंद्रीय बैंक अपने व्यापार-सहभागियों एवं अपने जैसी अर्थव्यवस्थाओं के निष्पादन की निरंतर निगरानी करते हैं।

3.47 पूर्व एशियाई देशों के अनुभव, जहां एक अपेक्षतया नियत विनिमय दर प्रणाली एवं व्यापक पूंजी गतिशीलता के संयोग से मुद्रा संकट पैदा हुआ, इस बात को रेखांकित करता है कि कील बंद विनिमय प्रणालियाँ सट्टेबाजों को आकर्षित करती हैं। न्यून पूंजी गतिशीलता; लंगर मुद्रा देश के साथ उच्च व्यापार अंश; इन देशों में आने वाले संभावी संकटों की समानता तथा सुदृढ़ घरेलू मूल संकेतक सफल विनिमय दर कील की पूर्व शर्तें हैं।

3.48 क्रगमैन (1979) और फ्लड एवं गार्बर (1984) द्वारा विकसित 'मुद्रा संकट के प्रथम पीढी नमूने'ऐसे परिदृश्य की अवधारणा प्रस्तुत करते हैं जिसमें बजट घाटे के अननुरक्षणीय उच्च स्तर के कारण उसका मुद्रीकरण होता है जिससे अति मुद्रास्फीति का जन्म होता है एवं विनिमय दर प्रणाली ढ़ह जाती है परिणामतः अधिकारिक विदेशी मुद्रा भंडार खाली हो जाता है। इसके विपरीत 'मुद्रा संकट के द्वितीय पीढी प्रतिमान'मुद्रा संकट के ऐसे परिदृश्यों का वर्णन करते हैं जहां मुद्रा संकट मूल संकेतकों के कारण पैदा नहीं होता। निवेशक अनाशावादिता से उत्पन्न स्वयं फलित संकट, निवेशकों की भेड़चाल या छूत, जहां एक देश में उपस्थित मुद्रा संकट दूसरे समान एवं अपने साथ आर्थिक

रूप से संबद्ध देश में मुद्रा संकट पैदा करता है, इनमें शामिल है। तृतीय पीढ़ी प्रतिमान यह दर्शाते हैं कि केवल विदेशी मुद्रा अद्रवता ही बैंकों से जमाराशि निकालने की होड़ की शुरुआत कर सकती है जिससे बाद में मुद्रा प्रणाली का नाश होता है (चांग एवं वेलास्को, 1999) कामिस्की एवं रिन्हार्ट (1999) ने यह सिद्ध किया कि बैंकिंग संकट मुद्रा संकट के पूर्वगामी संकेतक हैं। मुद्रा संकटों के कारणों एवं प्रभावों में विभिन्नताओं के बावजूद केंद्रीय बैंक की भूमिका महत्वपूर्ण है। यह राजकोषीय प्राधिकारी के साथ समन्वय स्थापित करके राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण में कमी करने में सहायता दे सकता है। वाणिज्यिक बैंकों के नियमन एवं पर्यवेक्षण के सशक्तिकरण बैंक सम्बंधित संकटों का निवारण किया सकता है तथा बासल-दो नार्म इस दिशा में सहायक सिद्ध होंगे।

3.49 मुद्रा संकट का एक हल मुद्रा बोर्ड है, जो नियत विनिमय दर प्रणाली का आधुनिक रूप है। मुद्रा बोर्ड प्रणाली में केंद्रीय बैंक एक पूर्व निर्धारित नियत विनिमय दर के अनुरक्षण का वचन देता है। विडंबना यह है कि यह प्रणाली तब स्थापित की जाती है जब मुद्रा में विश्वास की हानि होती है। मुद्रा बोर्ड नोट निर्गम में से विवेकाधिकार को समाप्त करके मुद्रा को अस्थिरता से बीमित करता है तथा आंतरिक मुद्रा स्फीति का निवारण करता है। हिक्स के अनुसार मुद्रा बोर्ड व्यवस्था का मूल डेविड रिकार्डो द्वारा विकसित शास्त्रीय मौद्रिक सिद्धान्त में पाया जाता हैं। ''रिकार्डियन सिद्धान्तों की शुद्ध व्याख्या के अनुसार केंद्रीय बैंकों की कोई जरूरत नहीं पड़नी चाहिए तथा एक नियमानुसार कार्य करने वाला मुद्रा बोर्ड इस कार्य को उतनी ही कुशलता से कर सकता है (हिक्स 1967)''। मारीशस में सन 1849 में पहले मुद्रा बोर्ड की स्थापना हुई (हांके, 2000) । तब से संसार के लगभग सभी भागों में सत्तर से अधिक मुद्रा बोर्ड कार्य कर चुके हैं। मुद्रा बोर्ड सुदृढ़ मूलभूत संकेतकों का स्थान नहीं ले सकते क्योंकि ''पर्याप्त रिज़र्व, राजकोषीय अनुशासन एवं मजबूत तथा सुप्रबंधित वित्तीय प्रणाली तथा विधि का शासन'' आदि मूलभूतों के बिना मुद्रा बोर्ड का सफल होना असंभव है (आर्थिक परामर्शदाता परिषद, 1999)। परंतु विशेष परिस्थितियों में एवं निश्चित अवधि के लिए स्थापित मुद्रा बोर्ड एवं विनिमय दर लक्ष्य नीति पर्याप्त स्थिरता, पारदर्शिता एवं कम मुद्रास्फीति दर सुनिश्चित करते हैं।

3.50 एक प्रासंगिक प्रश्न यह है कि क्या केंद्रीय बैंक मुद्रा के बाह्य एवं आंतरिक दोनों मूल्य निर्धारित कर सकता है। पूर्ण परिवर्तनीय पूंजी एवं चालू खातों के कारण केंद्रीय बैंक एक स्वतंत्र घरेलू मौद्रिक नीति नहीं रख सकता। यदि केंद्रीय बैंक ब्याज दर का लक्ष्य निर्धारित करके, मुद्रा के आंतरिक मूल्य का लक्ष्य निर्धारित करता है (मुद्रास्फीति दर), तो उसे विनिमय दर को मुक्त करना पड़ेगा। परंतु, केंद्रीय बैंक विदेशियों द्वारा आंतरिक आस्तियों की खरीद की सीमित कर के या अवशोषण हस्तक्षेप से आंतरिक एवं बाह्य बाज़ारों के बीच सर्किट ब्रेकर स्थापित करके अस्थायी तौर पर मुद्रा की दोनों अर्थात आंतरिक एवं बाह्य मूल्य निर्धारित कर सकता है। परंतु दीर्घावधि में केंद्रीय बैंक को आंतरिक एवं बाह्य मूल्य में से किसी एक को ही चुनना पड़ेगा (होगार्थ, 1996)।

विकास को प्रोत्साहन

3.51 विकास का प्रोत्साहन सभी आर्थिक नीतियों का केंद्रीय बिंदु होता है। मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि सारे केंद्रीय बैंक यह कार्य करते हैं। महान मंदी के बाद रोजगार प्रोत्साहन के साथ यह कार्य भी केंद्रीय बैंकों के सुपुर्द किया गया। परंतु अधिकांश देशों में यह कार्य एक विकास समर्थक पर्यावरण के निर्माण तथा विकास में रुकावट डालने वाले कारकों यथा उच्च ब्याज दरों के निवारण तक सीमित था। भारत जैसे विकासशील राष्ट्रों में इसका क्षेत्र उचित दर पर ऋण की आपूर्ति सुनिश्चित करने से कहीं ज्यादा है। चूंकि बाज़ार तंत्र पूर्ण विकसित नहीं है अतः कई मामलों में वृद्धि उत्तेजक ऋण का प्रवाह, सामान्यतया, पिछड़े क्षेत्रों में नहीं होता। केंद्रीय बैंक को यह सुनिश्चित करना आवश्यक होता है कि सभी उत्पादक क्षेत्रों तथा अविकसित अंचलों को पर्याप्त ऋण आपूर्ति हो। कुछ क्षेत्रों, जिनको अन्य क्षेत्रों के बनिस्बत वरीयता दी जाती है, में वृद्धि को सहारा देने की आवश्यकता होती है। वास्तव में ऐसा बहुत सा साहित्य उपलब्ध है जो आरंभिक चरणों में अलग-अलग वृद्धि दर से विकासमान विभिन्न क्षेत्रों की समस्या से निपटने के लिए केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप का समर्थन करता है। कई देशों में नियंत्रण के अभाव में बैंकिंग प्रणाली गरीब क्षेत्रों से बचत का अवशोषण कर उसका प्रवाह तेजी से विकसित हो रहे क्षेत्रों की ओर कर देती है जहां ऊँची ब्याज दर तथा सुरक्षा निश्चित होती है। (मिर्डाल 1965)।

3.52 विशिष्ट नीतियों द्वारा क्षेत्रीय विकास के अलावा अर्थव्यवस्था को बिना अति उत्साहित किए उसके समग्र ऋण आवश्यकताओं में वृद्धि करना आवश्यक होता है। केंद्रीय बैंक वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं तथा इसकी दर को पूर्वानुमान के अनुरूप बनाए रखने की कोशिश करते हैं। इस संदर्भ में उत्पाद अभाव की अवधारणा महत्वपूर्ण है। उत्पाद अभाव को घटाकर न्यूनतम बनाने की दृष्टि से ब्याज दर या अन्य मौद्रिक नीति उपकरणों के प्रयोग द्वारा समग्र व्यय को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। फिलिप्स कर्व में निहित मुद्रास्फीति - विकास अदला-बदली का सिद्धांत लघु अवधि में ही प्रासंगिक रहता है। अनुसंधान कर्त्ताओं ने यह चिह्नित किया है कि मध्य से दीर्घावधि में यदि मुद्रास्फीति

एक निश्चित सीमा से ज्यादा हो जाती है तो विकास पर दुष्प्रभाव पड़ता है (बारो, 1995 एवं फिशर, 1994) । अतः केंद्रीय बैंकों को विकास एवं मुद्रास्फीति के बीच एक नाजुक संतुलन कायम करना पड़ता है।

संप्रेषण नीति

3.53 भूतकाल में केंद्रीय बैंकिंग संप्रेषण के संदर्भ में ''मौद्रिक रहस्य'' (गुडफ्रेंड, 1985) एवं ''सृजनात्मक अस्पष्टता'' जैसे शब्दों को बहुत महत्व दिया जाता था। केंद्रीय बैंकों को प्रदत्त अधिक स्वायत्तता से वर्तमान युग में उनकी जिम्मेदारी में वृद्धि हुई है तथा संप्रेषण में पारदर्शिता उनकी एक बड़ी जिम्मेदारियों में से एक है। इसके अलावा मुद्रास्फीति लक्ष्य नीति के कारण संप्रेषण नीति - निर्माण प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन गया है। जहां भूतकाल में स्पष्ट संप्रेषण नीति के अभाव में बाज़ार सहभागी केंद्रीय बैंक के उद्देश्यों का अनुमान उनके कार्यों से लगाते थे वहीं हाल के वर्षों में केंद्रीय बैंक संप्रेषण ने बाज़ार प्रत्याशा का निर्धारण शुरू किया है। केंद्रीय बैंक को दृष्टिकोण, जोखिम का आकलन एवं अपने लक्ष्यों का जनता के बीच प्रसार करना पड़ता है। इनमें यह भी शामिल है कि जनता एवं बाज़ार सहभागी केंद्रीय बैंक के वक्तव्यों में निहित नाजुक गूढ़ार्थो को कितनी भली प्रकार समझते हैं क्योंकि उनकी समझ एवं व्याख्या पर मौद्रिक नीति की प्रभावकारिता निर्भर करती है। इस बात पर भी पर्याप्त चर्चा हो चुकी है कि क्या अलग-अलग एजेंटों के लिए संप्रेषण माध्यम अलग-अलग हों। हाल के वर्षों में सूचना एवं संप्रेषण प्रौद्योगिकी में हुए आविष्कारों ने केंद्रीय बैंकों के संप्रेषण को अधिक दक्ष बनाया है। परंतु इससे बाजारों एवं देशों में छूत फैलने की संभावना बढ़ी है। इन स्थितियों में यह आवश्यक हो जाता है कि बाज़ार को सम्यक संकेत दिए जाएं जो बाज़ार सहभागियों में विश्वास पैदा कर सकें।

सरकार का बैंकर

3.54 अपनी सरकारों के वित्त प्रबंध एवं उनको उधार देने या उनके सार्वजनिक ऋण का प्रबंध करने के उद्देश्य से अधिकांश बैंकों जैसे बैंक आफ इंग्लैंड का जन्म हुआ। इन केंद्रीय बैंकों को बहुविध राजकोषीय उत्तरदायित्व सौंपे गए तथा उनसे संबंधित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उन्होने संस्था संरचना विकसित की। विकसित देशों में केंद्रीय बैंकिंग के शुरुआती वर्षों में तथा विकासशील देशों में वर्तमान में भी राजस्व एवं व्यय में अस्थायी असंतुलन से उत्पन्न धनाभाव) से निपटने के लिए सरकारी पेपर की प्रतिभूति पर तदर्थ ऋण सहायता देते हैं।

3.55 पारंपरिक रूप से, मौद्रिक नीति एवं सार्वजनिक ऋण प्रबंध की अनुपूरकता के कारण सरकारी ऋण का प्रबंध केंद्रीय बैंकों द्वारा किया जाता था। केंद्रीय बैंक को मुक्त बाज़ार परिचालन का उपकरण उपलब्ध कराने तथा इसके नोटों के लिए आस्ति आधार प्रदान करने की दृष्टि से सरकारी प्रतिभूतियां उपयोगी हैं। परंतु चूंकि सरकारी ऋण के मुद्रीकरण से आधार मुद्रा में वृद्धि होती है अतः मूल्य स्थिरता के लिए इसकी आपूर्ति का नियंत्रण महत्वपूर्ण है। इसके मूल्य अस्थिरता प्रभाव को समाप्त करने के लिए केंद्रीय बैंक राजकोषीय घाटे से उत्पन्न संयुक्त द्रवता को असार्वजनिक क्षेत्र को नया ऋण जारी करके निरस्त करने का प्रयास कर सकता है। इन परिस्थितियों में भी अनुभवजन्य साक्ष्य से यह ज्ञात होता है कि भारी राजकोषीय घाटा आभासी एवं वास्तविक ब्याज दरों पर उर्ध्व दिशा में दबाव बढ़ाता है एवं मौद्रिक नीति परिचालन की स्वायत्तता को सीमित करता है।

3.56 अविवेकी राजकोषीय परिस्थितियां अंतर्निहित स्फीतिकारक प्रवृत्तियों वाली मौद्रिक नीति को जन्म देती हैं। इसके राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति उपकरणों में भी पारस्परिक निर्भरता है। प्रायः मौद्रिक नीति परिचालनों में सरकारी ऋण उपकरणों एवं बाज़ारों का प्रयोग किया जाता है। अतः मौद्रिक नीति उपकरणों एवं परिचालन प्रक्रियाओं का चुनाव सरकारी ऋण बाज़ार के निष्पादन पर असर डाल सकता है। मुद्रा नीति के प्रभावी परिचालन के लिए सरकार के लघु एवं दीर्घकालिक वित्त प्रवाह की जानकारी आवश्यक है।

3.57 हाल के वर्षों में ऋण प्रबंध एवं मुद्रानीति कार्यों में टकराव पर निरंतर चर्चा हो रही है। इसके समाधान के लिए कई देशों ने विशेषीकृत ऋण प्रबंध कार्य नीति के क्रियान्वयन हेतु एक अलग ऋण कार्यालय की स्थापना की है। इस विकल्प के चयन द्वारा सरकारें ऋण प्रबंध को दी गई भूमिका को रेखांकित; ऋण प्रबंध को राजनैतिक दखल अंदाजी से बचाने की केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता एवं ईमानदारी की रक्षा एवं सार्वजनिक उधार में पारदर्शिता एवं जवाबदेही सूनिश्चित करना चाहती हैं। (कसार्ड एवं फाकेर्ट्स-लांडो, 1997)

3.58 दिलचस्प बात यह है कि समय के साथ सार्वजनिक ऋण प्रबंध में परिवर्तन आया है। उस परिस्थिति, जब शुरू में कुछ सरकारें निजी बैंकरों से ऋण लेती थीं, से प्रारंभ करके सार्वजनिक ऋण प्रबंध की जिम्मेदारी निभाने के लिए अनेक केंद्रीय बैंकों की स्थापना की गई। वर्तमान में उसके मुद्रास्फीति कारक प्रभावों की व्यापक जानकारी के प्रकाश में यह धारण जोर पकड़ रही है कि केंद्रीय बैंक सरकार का वित्तपोषण करने से बचें। इसमें अतिरिक्त सरकारी ऋण प्रबंध हेतु राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति के बीच घनिष्ठ तालमेल जरुरी है तथा केंद्रीय बैंक सरकार की अतिरिक्त ऋण की मांग को अस्वीकार करने में सक्षम होना चाहिए। अनेक देशों के अनुभव से इस धारणा को बल मिलता है कि ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति कार्यों को अलग कर देना चाहिए।

3.59 अधिक विशिष्टतापूर्वक यह कहा जा सकता है कि यदि ऋण प्रबंध की जिम्मेदारी केंद्रीय बैंक को दी जाती है तो उसके समक्ष विरोधाभासी लक्ष्य जैसे कि क्या मौद्रिक नीति के दृष्टिकोण से द्रवता कम की जाए या राजकीय ऋण कार्यक्रम की सफलता के लिए द्रवता में वृद्धि की जाए में से एक का चुनाव करने की समस्या उत्पन्न होती है। यह मुद्दा भी चिंता का विषय बन जाता है कि सरकारी ऋण पर ब्याज भुगतान को कम करने के लिए केंद्रीय बैंक पर ब्याज दरों को कृत्रिम ढंग से करने के लिए दबाव डाला जा सकता है। इसके अतिरिक्त, जैसा अलसीना एवं अन्य (1990) का तर्क है कि एक अलग ऋण प्रबंध प्राधिकारी बजट निर्माण प्रक्रिया से बांह भर की दूरी बनाए रखेगा तथा लघु अवधि बजट लक्ष्यों के कारण दीर्घावधि ऋण प्रबंध लक्ष्यों की बलि नहीं देगा।

3.60 संसार भर में ऋण प्रबंध को मुद्रा प्रबंध कार्यों से पृथक करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है हालांकि विभिन्न देशों में इस की वास्तविक संरचना में अंतर है। आर्थिक सहकार एवं विकास संगठन (ओइसीडी) के कुछ सदस्य देशों जैसे जर्मनी एवं ब्रिटेन ने परिचालन दक्षता में सुधार लाने की दृष्टि से एक स्वायतः ऋण प्रबंध बोर्ड की स्थापना करने का फैसला किया, कुछ अन्य राष्ट्रों जैसे आस्ट्रेलिया, फ्रांस तथा अमरीका ने सार्वजनिक नीति एवं वित्तीय प्रबंध के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया तथा वित्त मंत्रालय के अधीन एक अलग बोर्ड की स्थापना की (सिंह, 2005)। विकासशील देशों के लिए आदर्श प्रतिमान के बारे में अलग-अलग मत हैं। कुछ विशेषज्ञ यह मानते हैं कि शुरू में यह बोर्ड वित्त मंत्रालय के नियंत्रणाधीन स्थापित किया जाए (करी एवं अन्य, 2003) जब कि कुछ अन्य यह मानते हैं कि ऐसे देशों, जिनमें राजकोषीय घाटे का स्तर ऊंचा है तथा वित्तीय बाज़ार अविकसित अवस्था में है, में ऋण प्रबंध नीति का समग्र प्रभावकारिता के लिए अलग बोर्ड की स्थापना उचित नहीं है। (काल्डरेन, 1997)

बैंकों का बैंक

3.61 कई देशों में केंद्रीय बेंकों की स्थापना वित्तीय स्थिरता के अनुरक्षण हेतु की गई। प्रारंभिक काल में वित्तीय प्रणाली में अनिवार्यतः बैंकों का वर्चस्व था; अतः वित्तीय स्थिरता बैंकों की स्थिरता पर निर्भर करती थी। वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय बैंकों को सबसे पहले अंतिम ऋणदाता की भूमिका दी गई। यह एक सीमित भूमिका थी तथा बैंक केवल संकट प्रबंध का कार्य करते थे।

3.62 केंद्रीय बैंकों की भूमिका का विस्तार हुआ है; तथा अब इसमें अन्य वित्तीय संस्थाओं तथा संपूर्ण भुगतान प्रणाली का पर्यवेक्षण भी शामिल है। संकट के फैलने की संभावनाएं कई गुना बढ़ गई हैं। उदाहरणार्थ एक बैंक स्तरीय समस्या बढ़ कर प्रणालीगत समय बन सकती है यदि कुछ बैंकों की असफलता के फलस्वरूप जमाकर्ताओं का सभी बैंकों से विश्वास डिग जाए एवं मजबूत संस्थाओं से भी अपनी जमा निकालने की होड़ लग जाए। बढ़ते वैश्वीकरण का अर्थ यह है कि ऐसे संकटों का प्रभाव राष्ट्रीय सीमाओं के आरपार भी फैल सकता है। समय के साथ-साथ केंद्रीय बैंक के कर्त्तव्य वाणिज्यिक बैंकों की मज़बूती सुनिश्चित करने तक ही सीमित नहीं रहे बल्कि सारी वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी भी उसमें समाहित हो गई।

अंतिम ऋणदाता

3.63 बैंकिंग संकटों के जन्म एवं संप्रेषण माध्यमों के बारे में अनेक सिद्धांत प्रचलित हैं। एक बैंकिंग संकट वह घटना है जब बैंकिंग प्रणाली के अनेक या सभी बैंक अपने ऋणदाताओं से आकस्मिक मांग का सामना करते हैं (कालोमिरिस एवं गोर्टन, 1991)। एकाधिक ऋण सृजन सिद्धांत के कारण बैंक ऐसी मांग का सामना नहीं कर सकते। ऐसे संकट काल में वाणिज्यिक बैंकों को बट्टीकरण के माध्यम से सामान्य द्रवता उपलब्ध करवाने के अलावा केंद्रीय बैंक, जिनका दिवाला न निकला हो ऐसे, द्रवताहीन बैंकों की भी मदद करता है। अंतिम ऋणदाता की भूमिका निर्वाह करने वाली संस्था के बिना बैंकिंग संकटों का निवारण अश्यक्य है।

3.64 वास्तव में कई केंद्रीय बैंकों की स्थापना बैंकिंग संकटों का सामना करने के लिए ही की गई। केंद्रीय बैंक का कार्य इतिहास 300 वर्ष से ज्यादा पुराना है। जैसा टेलर (1997) ने उल्लेख किया है, जब बैंक आफ इंग्लैंड की स्थापना हुई तब लाभ वृद्धि के दृष्टिकोण से प्रेरित होकर बैंक आवश्यकता से अधिक परिमाण में मुद्रा का निर्गम करते थे। अनेक बार ऐसी परिस्थितियां बनीं कि जब बैंक संयुक्त रूप से भी नकदी की मांग पूरी नहीं कर सकते थे तथा परिवर्तनीयता निलंबित कर देते थे। बैंक आफ इंग्लैंड प्रायः उनके ऋण के नकदीकरण में उनकी मदद करता था। इसी प्रकार तेजी मंदी के निरंतर चक्रों एवं कई बैंक असफलताओं की पृष्ठभूमि में सन 1913 में अमरीका में फ़ेडरल रिजर्व स्थापित किया गया। यद्यपि शुरू में केंद्रीय बैंक की आवश्यकता के बारे में आम सहमति नहीं थी परंतु 1907 के बैंक संकट के बाद अंततः केंद्रीय बैंकिंग की स्थापना के पक्ष में जनमत बना। आज के लिहाज से देखा जाए तो उस समय फंड की भूमिका अंतिम ऋणदाता तक ही सीमित थी।

3.65 केंद्रीय बैंक की अंतिम ऋणदाता भूमिका का मूल थोर्न टन (1802) के कार्यों में पाया जाता है, हालांकि यह शब्द बेरिंग (1797) ने गढ़ा था। बगहार (1873) ने इस अवधारणा को और जनप्रिय बनाया

तथा यह आज तक केंद्रीय बैंकिंग सिद्धांत का मुख्य आधार है। बगहार द्वारा प्रतिपादित अंतिम ऋणदाता भूमिका का निहितार्थ यह है कि केंद्रीय बैंक अद्रव परंतु समर्थ बैंकों को उच्च ब्याज दर पर द्रवता उपलब्ध करें ताकि प्रणालीगत संकट का निवारण हो और नैतिक जोखिम से बचा जा सके। यथा अपनी अंतिम ऋणदाता भूमिका के प्रयोग द्वारा केंद्रीय बैंक संकटप्रवण बैंकिंग क्षेत्र की स्थिरता की रक्षा करे ताकि वास्तविक क्षेत्र को उसके परिणामों से बचाया जा सके।

3.66 जहां तक नैतिक जोखिम की समस्या का प्रश्न है, इस संबंध में यह तर्क दिया जाता है कि यदि बैंकों को यह ज्ञात हो कि संकट के समय वे कम ब्याज दर पर ऋण ले सकते हैं तो वे अत्यधिक जोखिम उठाने को तत्पर हो सकते हैं। एक मत यह है कि उच्च ब्याज दर दंडात्मक दर है। एक मत यह है कि संकट के आरंभकाल में ही ब्याज दर में वृद्धि करनी चाहिए, ताकि दंड का भुगतान जल्दी किया जा सके। इससे बिना मूल्य सुरक्षात्मक ऋण लेने की प्रवृत्ति का निषेध होता है तथा बैंकिंग रिज़र्व की यथा संभव रक्षा होती है। व्हीलोक (2002) ने यह चिन्हित किया कि अमेरिकी फंड के बट्टा खिड़की परिचालनों की प्रत्यक्ष कार्यवाही (बाध्यकारी) से महान मंदी से पूर्व अमरीका में बट्टा खिड़की ऋण में विचारणीय कमी आई। गुडफ्रेंड एंड किंग (1988) की टिप्पणी के अनुसार बगहाट सिद्धांत के प्रतिपादन के समय वित्तीय बाज़ार अविकसित अवस्था में थे। वे तर्क देते हैं कि यद्यपि समग्र द्रवता (मौद्रिक नीति) की स्थिति में केंद्रीय बैंक का हस्तक्षेप महत्वपूर्ण है परंतु परिष्कृत अंतर बैंक बाज़ार के कारण व्यक्तिगत हस्तक्षेप (बैंकिंग नीति) की संभावना कम हुई है। यह तर्क इस बात पर जोर देता है कि मुक्त बाज़ार परिचालन से पर्याप्त द्रवता सुनिश्चित की जा सकती है तथा अंतर बैंक बाज़ार द्वारा उसका आबंटन किया जाता है। परंतु नवीन बैंकिंग सिद्धांत उपर वर्णित आलोचना को काटने वाला तर्क प्रस्तुत करते हैं। ब्रायंट एवं वालेस (1980) तथा डायमंड एवं डिबविग (1983) जमाकर्ताओं के बीच समन्वयाभाव के कारण बैंकों की कमजोरी की संभावना प्रदर्शित करते हैं। इसको देखते हुए अर्थव्यवस्था में वित्तीय स्थायित्व की अनुरक्षा के लिए अंतिम ऋणदाता की भूमिका का महत्व बना रहता है।

3.67 बैंकिंग संकट से संबंधित एक महत्वपूर्ण विषय यह है कि हानि को अंततःकिस प्रकार आबंटित किया या सहा जाता है। चूंकि अखिरकार केंद्रीय बैंक सरकार का ही हिस्सा है अतः प्रारंभिक तौर पर सरकार यह हानि सहन करती है परंतु कालांतर में इसे ऊंचे करों के रूपा में समाज से ही वसूला जाता है। अपनाए गए तकनीक संयोग से यह निश्चित होता है कि अंततः हानि का आबंटन किस प्रकार होता है।

3.68 बैंकों की हानि, जो प्रायः भारी अनिष्पादक आस्तियों के रूप में होती है, की समस्या के मूल कारणों का समाधान करना आवश्यक है। ये कारण प्रायः उद्योग क्षेत्र में विकृतियों, राजकोषीय असंतुलन या अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक असंतुलन में देखे जा सकते हैं तथा इनके समाधान हेतु बड़े नीति परिवर्तनों की आवश्यकता पड़ती है। बैंकों के कामकाज के लिए सुदृढ़ एवं स्पर्धात्मक परिचालन पर्यावरण बनाने के साथ-साथ वास्तविक क्षेत्र में प्रतियोगिता एवं दक्षता को प्रोत्साहन देने के लिए सुदृढ़ एवं स्थिर समग्र आर्थिक पर्यावरण की रचना की जाए। वास्तविक क्षेत्र की विकृतियों को मिटाए बगैर बैंकिंग संकट का समाधान करने से बाद में संकट की पुनरावृत्ति की संभावना बनी रहती है। ज्यो-ज्यों बैंकिंग क्षेत्र का विस्तार हुआ एवं इसने अतिरिक्त कार्य शुरू किए, इसका जोखिम भी कई गुना बढ़ गया।

वित्तीय क्षेत्र विनियमन एवं पर्यवेक्षण

3.69 बैंकिंग कारोबार के कई गुण ऐसे हैं जिनसे अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है। प्रथम उनकी मध्यस्थ की भूमिका से उत्तोलन का जन्म होता है। बैंकों की आस्तियों एवं देनदारियों में बेमेलता निहित होती क्योंकि आस्तियों की परिपक्वता अवधि प्रायः देनदारियों से अधिक होती है। चूंकि वाणिज्यिक बैंकों की शोध क्षमता बैंक की अपने जमाकर्त्ताओं एवं वित्तीय बाज़ारों का विश्वास बनाए रखने की क्षमता पर निर्भर होती है अतः बैंक का पारदर्शिता अभाव काउंटर पार्टी की बैंक सामर्थ्य एवं दुर्बलताओं का संगत आकलन करने की कोशिश को बेकार कर देता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बैंक की तुलनपत्र एवं तुलनपत्रेतर स्थितियों में औद्योगिक एवं वाणिज्यिक कंपनियों की अपेक्षा तीव्र गति से परिवर्तन हो सकते हैं। (वेयर, 1996)

3.70 वित्तीय क्षेत्र स्थायित्व के अनुरक्षण हेतु केंद्रीय बैंक वित्तीय क्षेत्र के विनियमन एवं पर्यवेक्षण में लगातार अभिरुचि रखते हैं। वित्तीय क्षेत्र के प्रभावकारी प्रबंध एवं बाज़ार अनुशासन के लिए विनियमन एवं पर्यवेक्षण आवश्यक है क्योंकि ढीले ढाले, खराब तरीके से डिजाइन किए हुए या अपर्याप्त क्रियान्वयन से वित्तीय अस्थिरता बढ़ सकती है। इसके विपरीत पर्यवेक्षण स्तर पर प्रत्यक्ष तौर पर नरम नीति से विकृत प्रेरणा के आधार पर कार्यरत कमजोर बैंकों को कारोबार करने की छूट मिल सकती है या अप्रत्यक्ष तौर पर अंदर वालों के दुर्व्यवहार को प्रोत्साहन देता है जिससे कालांतर में बड़ी साफ सफाई की आवश्यकता पड़ती है (शेंग, 1991)

3.71 बैंकिंग पर्यवेक्षण का प्राथमिक औचित्य यह है कि इससे जमाकर्ताओं की हानि का जोखिम सीमित होता है तथा बैंकों के प्रति जनसामान्य के विश्वास की रक्षा होती है। जबकि पर्यवेक्षण स्वभावतः

एक बैंक पर ध्यान केंद्रित करता है परंतु पर्यवेक्षक को इस संभावना के प्रति सजग रहना चाहिए कि संस्था विशेष की समस्याओं का अन्य संस्थाओं पर व्यापकतर एवं प्रणालीगत दुष्प्रभाव एवं भुगतान प्रणालियों की मजबूती पर असर पड़ता है (वेयर, 1996)। पर्यवेक्षण कार्य का ध्यान प्रमुखतया जमाकर्ता रक्षा गतिविधियों, कारोबार परिचालन नियम एवं सूचना प्रकटीकरण, व्यष्टिगत - विवेक सम्मत पर्यवेक्षण (संस्थाओं की प्रत्यक्ष एवं परोक्ष निगरानी) एवं समष्टिगत विवेकसम्मत विश्लेषण पर केंद्रित होता है।

3.72 हाल के वर्षों में उदारीकरण एवं वैश्वीकरण से कई देशों के वित्तीय क्षेत्रों का अभूतपूर्व विकास हुआ है। बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थानों में अंतर का धूमिल होना एवं सार्वभौम बैंकिंग की बढ़ती प्रवृत्ति, वित्तीय लिखतों जैसे व्युत्पन्नों में लगातार तीव्र गति नवीकरण तथा राष्ट्रीय सीमाओं से पार वित्तीय बाज़ारों का एकीकरण इस क्षेत्र के उदीयमान लक्षण हैं। इन परिवर्तनों से वित्तीय क्षेत्र का पर्यवेक्षण अधिक जटिल एवं गतिशील बना है। तदनुसार संसार में पर्यवेक्षकों ने अपना ध्यान व्यष्टि विवेकी विश्लेषण से हटा कर समष्टि-विवेकी-विश्लेषण पर केंद्रित किया है।

3.73 बैंक पर्यवेक्षकों का यह प्रयास रहता है कि बैंक वित्तीय तौर पर मजबूत एवं सुप्रबंधित हों तथा अपने जमाकर्त्ताओं के लिए कोई जोखिम पैदा न करें। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पर्यवेक्षक तीन प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास करते हैं : i) प्रत्येक बैंक कितना जोखिम उठा रहा है? ii) उस जोखिम के प्रबंध के लिए कौन-कौन से भौतिक (यथा पूंजी एवं द्रवता) या अभौतिक (प्रबंध की गुणवत्ता एवं नियंत्रण प्रणालियां) साधन उपलब्ध हैं? iii) क्या चिन्हित संसाधन स्तर जोखिम प्रबंध के लिए पर्याप्त है? (ग्रे, 1996)। हाल के वर्षों में परंपरागत पूँजी, आस्तियां, प्रबंध, आय, द्रवता एवं ब्याज दर संवेदनशीलता पर आधारित दृष्टिकोण से हटाकर अधिक जोखिम आधारित दृष्टिकोण पर केंद्रित किया जा रहा है। इस दृष्टिकोण का मूल बासल पूंजी समझौते की सिफारिशों (1988) में निहित है। बासल समिति बैंकिंग पर्यवेक्षण मामलों पर चर्चा के लिए एक मंच उपलब्ध करवाती है। हाल के वर्षों में यह बैंकिंग पर्यवेक्षण के सभी पहलुओं पर मानक स्थापित करने वाली संस्था के रूप में उभरी है। बासल समिति द्वारा विकसित संरचना में प्रमुख जोखिमों, उनका स्तर एवं उन क्षेत्रों जिनमें वह पैदा हो सकते हैं की पहचान का समावेश है। इन जोखिमों की पहचान के बाद इनमें कमी लाने के लिए समुचित संसाधनों सहित एक व्यापक पर्यवेक्षी संरचना का संयोजन किया जाना है। आवश्यक संसाधनों का परिमाण संभावित जोखिमों के स्तर एवं सघनता के आधार पर तय किया जाता है। निकटतर भूतकाल की घटना यह है कि ''अंतरराष्ट्रीय कन्वर्जेंस आफ कैपिटल मेजरमेन्ट एण्ड कैपिटल स्टैन्डर्ड्स'' नई संरचना जो बासल II के (नवंबर 2005) नाम से विख्यात है, में 'अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत बैंकों की पूंजी पर्याप्तता से संबंधित पर्यवेक्षी विनियम का प्रावधान किया गया है। बासल-II एक 'त्रिस्तंभ अवधारणा' - न्यूनतम पूँजी आवश्यकता, पर्यवेक्षी समीक्षा एवं बाज़ार अनुशासन का प्रयोग करता है। प्रथम स्तंभ के अनुसार परिष्कृत जोखिम संवेदनशीलता का विकास किया जाता है ताकि बैंकों के समक्ष आने वाले तीनों प्रकार के जोखिमों यथा साख जोखिम, परिचालन जोखिम एवं बाज़ार जोखिम के लिए पूंजी पर्याप्तता का आकलन किया जा सके। इसके साथ ही, यह व्यवस्था हो कि प्रत्येक संघटक की अलग-अलग परिष्कार स्तर पर दो या तीन तरीकों से गणना की जा सके। द्वितीय स्तंभ प्रथम स्तंभ के प्रति नियामक प्रतिक्रिया से संबंध रखता है तथा पहले से उपलब्ध उपकरणों की बजाय अधिक परिष्कृत उपकरण उपलब्ध करवाता है। यह बैंकों के समक्ष आने वाले अन्य जोखिमों यथा प्रमुखतया - प्रतिष्ठा हानि एवं विधिक जोखिमों के प्रबंध के लिए संरचना उपलब्ध करता है। तृतीय स्तंभ बैंकों के अनिवार्य प्रकटीकरणों के दायरे का विस्तार करता है। इसकी रूपरेखा इस प्रकार बनाई गई है कि बाज़ार को किसी बैंक के जोखिमों के बारे में सही जानकारी पाने एवं तदनुसार उसके साथ व्यवहार सक्षम बनाता है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यवेक्षी प्रणालियों में सुधार के लिए किए जा रहे प्रयासों के बावजूद कुछ बाधाएं यथा पर्यवेक्षी स्वायत्तता का अभाव, राजनैतिक हस्तक्षेप, जो दुर्बल बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं को बंद नहीं होने देता, पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व का अभाव के अलावा विधिक चुनौती का डर प्रभावकारी पर्यवेक्षण में समस्याएं पैदा करते हैं।

3.74 केंद्रीय बैंक परंपरागत तौर पर बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं का पर्यवेक्षण करते रहे हैं। परंतु चूंकि केंद्रीय बैंक अपनी नियामक भूमिका में बाज़ार सहभागियों के व्यवहार को प्रभावित करने की स्थिति में होते हैं अतः केंद्रीय बैंकों द्वारा पर्यवेक्षण से नैतिक जोखिम की समस्या पैदा होती है। अतः आजकल अलग पर्यवेक्षक की अवधारणा को बल मिला है।

3.75 केंद्रीय बैंक ही पर्यवेक्षण का कार्य करे इसके पक्ष में अनेक तर्क दिए जा सकते हैं। प्रथमतः, केंद्रीय बैंक वित्तीय एवं वास्तविक क्षेत्र से संबधित खूब सारे आंकड़े एकत्रित करते हैं तथा बाज़ार एवं कार्यवाही के समय के बारे में वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण बना सकते हैं। दूसरे, अधिकांश केंद्रीय बैंक भुगतान एवं निपटान सेवाएं प्रदान करते हैं तथा प्रणाली की द्रवता स्थिति की शीघ्र निगरानी करने में सक्षम होते हैं। तीसरे, अपनी अंतिम ऋणदाता की भूमिका के कारण वह वित्तीय क्षेत्र की उधार जरुरतों की पूर्वसूचना पा सकता है जिससे उनकी द्रवता आवश्यकताओं का पूर्वाभास हो सकता है।

3.76 इसके विपरीत पर्यवेक्षण कार्यों को केंद्रीय बैंकों को नहीं सौंपने का मुख्य तर्क नैतिक जोखिम समस्या पर आधारित है। नैतिक जोखिम की समस्या तब पैदा होती है जब केंद्रीय बैंक द्वारा पर्यवेक्षित संस्थाओं के जमाकर्त्ताओं एवं ऋणदाताओं को यह विश्वास होता है कि असफलता की स्थिति में उनके हितों की सुरक्षा की जाएगी जिससे अवांछनीय जोखिम उठाने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है। ''नैतिक जोखिम'' की समस्या के अलावा ''क्रिसमस ट्री इफेक्ट'', ''अफसरशाही का दानव'' ''नियामक बंदी'' आदि से भी यह संकेत मिलता है कि मौद्रिक नीति एवं पर्यवेक्षी भूमिका का विलगन वांछनीय है (दिमास्त्री एवं गुनेरो, 2003)।

3.77 नैतिक जोखिम समस्या के समाधान की कोशिश में, कुछ देशों ने पर्यवेक्षी भूमिका को केंद्रीय बैंक से अलग किया है, यूनाइटेड किंगडम इसका उल्लेखनीय उदाहरण है जहां सन 1988 में वित्तीय पर्यवेक्षी प्राधिकारी का सृजन किया गया परंतु इस निकाय की स्थापना को अधिक समय नहीं हुआ है जिससे ऐसे विलगन का आकलन करना असामयिक होगा (वासुदेवन, 2003)

3.78 बैंक पर्यवेक्षण एवं मौद्रिक नीति के संयुक्त दृष्टिकोण के समर्थक ''बड़े पैमाने एवं विस्तृत विषय क्षेत्र के सुलाभ'', 'वित्तीय निकाय समूहों का अस्तित्व', ''प्रतिस्पर्धा निरपेक्षता'' एवं ''पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व'' आदि कारणों का उल्लेख करते हैं। ''प्रतिस्पर्धा निरपेक्षता'' के परिप्रेक्ष्य में यह उल्लेख किया जाता है कि वित्तीय उत्पादों के बीच मिटते अंतर के कारण यह संभव है एक समान उत्पाद उपलब्ध करने वाली वित्तीय संस्थाओं का पर्यवेक्षण अलग-अलग किया जाएगा। इसका परिणाम यह हो सकता है कि उन संस्थाओं पर अलग विनियम लागू होंगे, तथा उनकी सूचना आवश्यकताएं भिन्न-भिन्न होंगी जिससे उनके पर्यवेक्षी खर्चे असमान होंगें। इन भिन्नतापूर्ण नियामक व्यवहार एवं लागत से कुछ संस्थाओं को सापेक्ष प्रतिस्पर्धात्मक लाभ मिलेगा इनको पर्यवेक्षी अंतरपणन (अरबिट्रेज) उत्तरदायित्वों की स्पष्ट परिभाषा से वित्तीय नियामकों के परिचालन की पारदर्शिता एवं जवाबदेही न सिर्फ सांविधिक लक्ष्यों के सापेक्ष इसके निष्पादन बल्कि नियामक प्रणाली, विनियमन लागत एवं इसकी अनुशासनात्मक नीतियों के क्रियान्वयन में उल्लेखनीय सुधार होगा।

3.79 पर्यवेक्षी कार्यों का विलगन एवं केंद्रीय बैंक के बाहर उनका प्रस्थापन संभव है, जैसा कि यूनाइटेड किंगडम के उदाहरण से स्पष्ट होता है। परंतु ऐसी स्थिति में नीतियों, कार्यवाहियों एवं सूचना के जबरदस्त समन्वय की जरूरत पड़ती है। वित्तीय स्थिरता के विषय में पारस्परिक सहयोग की संरचना स्थापित करने के लिए वित्तीय पर्यवेक्षी प्राधिकारी, केंद्रीय बैंक एवं राजकोष के मध्य स्पष्ट सहमति आवश्यक है। सब संस्थाओं की भूमिकाओं की स्पष्ट परिभाषा की आवश्यकता है ताकि हरेक की स्पष्ट एक सुपरिभाषित भूमिका हो तथा हरेक को उसके कार्यों के लिए जवाबदेह ठहराया जा सके । ''प्रत्येक संस्था एवं संसद के परिचालन में पारदर्शिता होना अनिवार्य है तथा जनता यह अवश्य जान सके कि कौन किस काम के लिए जिम्मेदार है'' (बैंक आफ इंग्लैंड, 1997) प्रत्येक संस्था अपने उत्तरदायित्वों को दक्षतापूर्वक निभा सके इसके लिए उनके बीच सूचना का नियमित आदान प्रदान होना चाहिए । समन्वय में असफलता से प्रणालीय विनाश का खतरा हो सकता है।

3.80 बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों में घटती हुई सुस्पष्टताओं की पृष्ठभूमि में अतिनियामक (सुपर रेगुलेटर) की अवधारणा को बल मिला है। 'अतिनियामक'शब्द का तात्पर्य उस संरचना से है जिसमें बैंकों, प्रतिभूति फर्मों एवं बीमा कंपनियों के नियामकों की भूमिकाओं का संयोग होता है। अतिनियामक के पक्ष में ''बड़े पैमाने के सुलाभ'', ज्यादा जवाबदेही तथा प्रतिस्पर्धात्मक असमानता, इनकांसिस्टेंसी, नकल, अतिव्यापन (ओवरलेप) एवं कमियाँ आदि समस्याओं का निवारण तर्क दिए जाते हैं। परंतु आलोचक चिन्हित करते हैं कि उदाहरणार्थ, बैंकों एवं म्युच्युअल फंड के विनियमन में एक जैसे दृष्टिकोण से काम नहीं लिया जा सकता। एक और जहां बैंकों का नियमन विवेकसम्मत कारणों से किया जाता है वहीं म्युचुअल फंडों के विनियमन का उद्देश्य निवेशकों के लिए पर्याप्त सूचना का प्रकटीकरण सुनिश्चित करना हो सकता है। एक नियामक विभिन्न प्रकार के जोखिमों एवं पर्यवेक्षण लक्ष्यों में अंतर को समझने में असमर्थ हो सकता है (गुडहार्ट एवं अन्य, 1998)। इस विषय में प्रमुख प्रश्न यह है कि; बैंकिंग पर्यवेक्षण में केंद्रीय बैंक की महत्वपूर्ण भूमिका के मद्देनजर ऐसे अतिनियामक की स्थापना केंद्रीय बैंक के अंदर की जाए या बाहर की जाए। राज (2005) ने चिन्हित किया है कि उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं, जहां वित्तीय प्रणाली जटिल नहीं है वहा विशिष्ट नियामक द्वारा पर्यवेक्षण की वर्तमान प्रणाली सुचारु रूप से कार्य कर रही है। अतः केंद्रीय बैंक के अंदर या बाहर एक अतिनियामक की स्थापना का कोई औचित्य नही है। इस व्यापक बहस एवं निरंतर जारी अनुभवजन्य अध्ययन के बावजूद साहित्य का कोई अंतिम निर्णय नहीं आया है।

वित्तीय स्थिरता

3.81 वित्तीय स्थिरता की अवधारणा को अनेक प्रकार से परिभाषित किया गया है। मिश्किन (1991) के अनुसार वित्तीय स्थिरता वह स्थिति है जिसमें वित्तीय प्रणाली बिना किसी बड़ी बाधा के निरंतर दक्षता पूर्वक बचतों का निवेश अवसरों में आबंटन करती है। अपने इस दृष्टिकोण, कि एक बैंक विशेष की असफलता या आस्ति मूल्यों में भारी उतार चढ़ाव अनिवार्यतः बैंकिंग अस्थिरता का परिचायक नहीं हैं,

के कारण यह व्यापक स्थूल परिभाषा महत्वपूर्ण है। परंतु परिचालन की दृष्टि से अन्य परिभाषाएं ज्यादा संगत जान पड़ती है। उदाहरणार्थ रेड्डी (2004) के अनुसार अबाध वित्तीय लेनदेन की सुनिश्चितता, वित्तीय प्रणाली में सभी सहभागियों एवं जोखिम धारकों के विश्वास के एक न्यूनतम स्तर का अनुरक्षण, अत्यधिक अस्थिरता का अभाव, जिससे वास्तविक अर्थव्यवस्था पर अनावश्यक एवं बुरा असर पड़ता है, के तौर पर वित्तीय स्थिरता की परिभाषा है।

3.82 यद्यपि वित्तीय स्थिरता के विषय पर 1990 के दशक से नई दिलचस्पी के साथ चर्चा की जा रही है, परंतु इसकी चर्चा का एक लंबा इतिहास है। जैसा कि टयूमा (2005) ने नोट किया है स्वर्ण मानक के दौर में उपलबध स्वर्ण भंडार एवं बैंक नोटों के बीच समानता स्थापित करना मात्र केंद्रीय बैंक का उत्तरदायित्व था तथा इस प्रकार मुद्रा आपूर्ति का निर्णय बाह्य कारणों से किया जाता था। चूंकि स्वर्ण मानक प्रणाली के अंतर्गत स्वर्ण भंडार द्वारा केंद्रीय बैंक का मुद्रा जारी करने का सामर्थ्य सीमित था अतः समाशेधन गृहों की स्थापना की गई, जो किसी सहभागी बैंक से जमाकर्ताओं द्वारा धन निकालने की होड़ होने पर उसे मुद्रा उपलब्ध करवाते थे। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कागजी मुद्रा के युग में, जैसा कि पहले चर्चा की गई, नीति का जोर मूल्य स्थिरता पर हुआ। 1980 दशक के उत्तरार्ध में मूल्य स्थिरता प्राप्त करने के बाद वित्तीय स्थिरता की ओर ध्यान दिया गया। हाल के वर्षों में वैश्वीकरण के बढ़ते स्तर के कारण वित्तीय अस्थिरता राष्ट्रीय से अंतरराष्ट्रीय बाजारों में फैल सकती है, जैसा कि सन 1997 के पूर्वी एशियाई संकट के समय हुआ था। प्रमुखतया तीव्रगति प्रौद्योगिकीय नवीकरण तथा क्षेत्रीय अंतर के धूमिल होने से, जिसने विभिन्न वित्तीय मध्यस्थों को गैर परंपरागत क्षेत्रों में भाग लेने की छूट दी, 1990 के दशक में वित्तीय अस्थिरता का खतरा कई गुना बढ़ गया है। जोखिमों के इस प्रकार अंतरराष्ट्रीय बाजार में फैलने की संभावना वित्तीय बिरादरी के लिए सीधी चिंता की बात है। वित्तीय संकट झेल रहे देशों की सहायता के लिए विभिन्न प्रयास किए गए हैं। इस सहायता से छूत के खतरे की रोकथाम तथा संकट की आर्थिक लागत का समय विस्तार करने में मदद मिलने की आशा की जाती है।

3.83 बैंकिंग क्षेत्र में अंतर्निहित खतरों के अलावा इसके समक्ष अन्य खतरे भी आ सकते हैं। ये खतरे निगम शासन के क्षेत्र में दुर्बलता एवं असफलता, बाजार अनुशासन का अभाव या एकाधिक नियमन एवं पर्यवेक्षण निकायों के मध्य पर्याप्त समन्वय के अभाव से पैदा होते हैं।

3.84 चूंकि वित्तीय अस्थिरता से अनुरक्षणीय उत्पादन वृद्धि एवं मूल्य स्थिरता जैसे महत्वपूर्ण समष्टि आर्थिक लक्ष्यों के प्रति खतरा पैदा होता है अतः केंद्रीय बैंक वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने में विशेष रुचि रखते हैं। यथावश्यक संकटकालीन द्रवता सहायता देने के लिए केंद्रीय बैंक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों की लगातार निगरानी करते हैं। इसके अतिरिक्त मौद्रिक नीति का क्रियान्वयन वित्त बाजारों में परिचालन द्वारा ही किया जाता है तथा मौद्रिक नीति के वास्तविक क्षेत्र में संप्रेषण प्रमुख वित्त बाजारों एवं संस्थाओं के सुचारु क्रिया कलाप पर निर्भर करता है।

3.85 परंपरा से ऐसा विश्वास किया जाता है कि मौद्रिक स्थायित्व से वित्तीय स्थायित्व आता है। परंतु जैसा उदेशी (2005) ने वर्णन किया है, 1990 दशक की घटनाओं से आवश्यकतया ऐसा प्रतीत नहीं होता है। हालांकि, विशेषतः दीर्घावधि में इन दोनों में अनुपूरकता है परंतु लघु अवधि में ऐसा सत्य हो यह जरुरी नहीं है। एक स्थिर समष्टि आर्थिक पर्यावरण -निम्न एवं स्थिर मुद्रास्फीति दर, लगातार वृद्धि एवं निम्न ब्याज दर जिसके लक्षण हैं, से भविष्य के आर्थिक अवसरों के प्रति अत्यधिक आशावादी दृष्टिकोण पैदा होता है तथा जोखिमों की कम परवाह की जाती है। तदनुसार यह देखा गया कि प्राय समष्टि आर्थिक स्थैर्य अथवा उच्च वृद्धि के लंबे अंतराल के बाद वित्तीय अस्थिरता का जन्म होता है। परंतु केंद्रीय बैंक को हमेशा सतर्क रहना चाहिए।

3.86 वास्तव में केंद्रीय बैंक के लिए प्रासंगिक प्रश्न वित्तीय स्थायित्व का नहीं है बल्कि यह है कि वित्तीय स्थायित्व को कितना महत्वपूर्ण समझा जाए। विभिन्न देशों द्वारा लागू किया गया व्यवहार एक व्यापक इंद्रधनुष के रूप में कल्पित किया जा सकता है - जिसके एक छोर पर शुद्ध स्फीति लक्ष्य निर्धारक प्रणाली, जिसमें संकट के समय ही वित्तीय अस्थिरता संबंधी चिंताओं का समाधान किया जाता है (स्वेंसन, 2002) तथा दूसरे छोर पर वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने हेतु प्राचेतस दृष्टिकोण वाला सक्रिय केंद्रीय बैंक स्थित है (बोरियो एवं लोव, 2002)। अतः इष्टतम दृष्टिकोण द्वारा इन दो अतियों के मध्य संतुलन बनाकर चलने की आवश्यकता है इसके अलावा विवेकहीन उद्धमता की समस्या है जैसा ग्रीनस्पान (1996) ने संकेत दिया ''हमें यह कैसे ज्ञान होगा कि कब विवेकहीन उद्धमता के कारण आस्तियों के मूल्य अनावश्यक रूप से बढ़ रहे हैं जो बाद में अप्रत्याशित एवं दीर्घ संकुचन से ग्रस्त हो जाते हैं जैसा कि पिछले दशक में जापान में हुआ ? हम इस आकलन का मौद्रिक नीति में किस प्रकार समावेश करें।''

3.87 यह समझने, कि कब केंद्रीय बैंक द्वारा सक्रिय नीति की आवश्यकता है, में आने वाली कठिनाई के बावजूद कुछ सुविकसित एहतियाती उपाय हैं जो अर्थव्यवस्था में वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में मदद करते हैं। एक मानक एवं आचार समुच्चय, विवेकसम्मत विनिमय, शीघ्र चेतावनी संकेतो, बैंक पर्यवेक्षण, पूंजी पर्याप्तता के अंतरराष्ट्रीय मानदंडों का पालन, आस्ति वर्गीकरण प्रक्रिया एवं तरीकों,

आय अभिज्ञान सिद्धांत, आस्तियों का बाज़ार दर पर मूल्यन, एवं अनर्जक आस्तियों में कमी के लिए वसूली तंत्र आदि इनमें शामिल हैं।

भुगतान प्रणाली कार्य

3.88 किसी भी आधुनिक अर्थव्यवस्था में भुगतान एवं निपटान प्रणाली समस्त आर्थिक गतिविधियों की रीढ़ का कार्य करती है। हालांकि वस्तु विनिमय सहित भुगतान एवं निपटान माध्यमों का इतिहास सभ्यता की शुरुआती अवस्था से प्रारंभ होता है, परंतु ऐसी प्रणालियों जिनमें बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, की शुरुआत सापेक्षतया निकट भूतकाल की घटना है।

3.89 सर्व प्राचीन निपटान प्रणाली का इतिहास आधुनिक समाशोधन गृह के पूर्ववर्ती संस्था के विकास तक चिह्नित किया जा सकता है। समाशोधन गृह वास्तव में बैंक के ग्राहकों द्वारा अन्य बैंकों पर आहरित चेकों के आदान-प्रदान के लिए निर्धारित मिलन स्थल-उदाहरणार्थ कुछ सदियों पहले ब्रिटेन में काफी हाउस, था। सरल लिखत विनिमय सुविधा के रूप में प्रारंभ हुए इस व्यवहार का रूपांतरण होकर यह शीघ्र ही निधि निपटान में सहायक प्रमुख केंद्र के रूप में विकसित हुआ। शीघ्र निपटान की बढ़ती हुई आवश्यकता से केंद्रीय बैंक की भूमिका के महत्व में वृद्धि हुई तथा उन्होंने समाशोधन एवं निपटान संचालन कार्य अपने ऊपर ले लिया।

3.90 सुविकसित प्रक्रियाओं द्वारा समाशोधन एवं निपटान के प्राचीनतम प्रारूप यूरोप के देशों तथा अमरीका में, जहां केंद्रीय बैंकों ने यह जिम्मेदारी स्वीकार की, पाए जाते थे। बैंक आफ इंग्लैंड, बैंक डे फ्रांस, रिक्स बैंक तथा फ़ेडरल रिज़र्व भी कागजी चेकों का समाशोधन करते थे तथा सदस्य बैंकों के निपटान का लेखा रखते थे। अन्य राष्ट्रों ने भी इसका अनुकरण किया तथा उन्होंने भी समान दृष्टिकोण अपना कर केंद्रीय बैंक को समाशोधन गृह का प्रबंधक नियुक्त किया तथा कुछ नियमों का पालन करने का वचन देकर अन्य बैंक इसकी गतितिविधयों में भाग ले सकते थे। कुछ देशों में उनके बृहत्तर भौगोलिक विस्तार के कारण डाक कार्यालयों की महत्वपूर्ण भूमिका के मद्देनजर उनको भी समाशोधन प्रक्रिया में भाग लेने की अनुमति दी गई। वास्तव में प्रत्यय निधि स्थानांतरण के सर्वप्रथम प्रारूप - जाइरो प्रणाली यूरोप में बीसवीं सदी के प्रारंभ में डाक प्रणाली से ही विकसित हुई, जबकि जाइरो आधारित बैंक निधि अंतरण व्यवहार 1960 के दशक के मध्य में शुरू हुए।

3.91 भुगतान प्रणाली के परिचालनों के प्रति केंद्रीय बैंकों ने अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाए हैं। उदाहरण के लिए अमरीका में फ़ेडरल रिज़र्व बैंक समाशोधन कार्यों की निगरानी के अलावा चेकों के प्रसंस्करण की सुविधा भी मुहैया करवाता है। यद्यपि यह सेवा फ़ेडरल रिज़र्व प्रणाली द्वारा उपलब्ध की जाती है परंतु कागजी चेकों एवं इलेक्ट्रॉनिक लेनदेन दोनों के लिए निजी निकाय भी ये सेवाएं उपलब्ध कराते हैं, जिससे प्रतिस्पर्धा का जन्म होता है। कुछ अन्य विकसित अर्थव्यवस्थाओं जैसे यूनाइटेड किंगडम एवं कनाडा में केंद्रीय बैंक समाशोधन एवं भुगतान लिखतों के प्रसंस्करण संबधी सेवाएं नहीं देते; इसके स्थान पर यह कार्य निजी संस्थाओं को सौंपा गया हैं। यद्यपि बैंकरों का संघ या प्रतिनिधि इन संस्थाओं का शासन करते हैं। कुछ स्केडिनेवियन देशों, जैसे स्वीडन में भी एक सदी से भी ज्यादा समय से इसी दृष्टिकोण का पालन किया जाता है। एशिया में सिंगापुर, मलेशिया एवं हांगकांग की विशेषता यह कि इनके केंद्रीय बैंक या मौद्रिक प्राधिकारी इन प्रणालियों का परिचालन नहीं करते। सबसे महत्वपूर्ण कारण यह है कि खुदरा एवं सामान्यतः निम्न मूल्य लेनदेन के संबंध में यह दृष्टिकोण अच्छा सिद्ध होता है। केंद्रीय बैंक द्रवता का सबसे बड़ा स्रोत होने तथा मौद्रिक नीति के दृष्टिकोण से उच्च मूल्य भुगतान प्रणाली के महत्व को देखते हुए उच्च मूल्य भुगतान प्रणालियों, जैसे, तत्काल सकल भुगतान प्रणाली का परिचालन एवं प्रबंध विशिष्टतया केंद्रीय बैंकों द्वारा किया जाता है। निपटान की अंतिमता सुनिश्चित करने तथा बड़ी सीमा तक निपटान जोखिम में कमी के लिए सभी समाशोधन गतिविधियों के निपटान का कार्य सामान्यतः अनिवार्य रूप से केंद्रीय बैंक द्वारा निष्पादित किया जाता है।

3.92 कालांतर में केंद्रीय बैंकों ने समाशोधन कार्यों के आयोजन का त्याग करके निधि स्थानांतरण प्रक्रियाओं द्वारा स्थूल आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति का काम अपने हाथ में लिया; उनमें से कुछ ने समाशोधन कार्यों का त्याग कर दिया है परंतु निपटान कार्यों को अपने पास रखा है। ऐसी स्थितियों में केंद्रीय बैंकेतर निकाय समाशोधन कार्यों का निष्पादन करते हैं तथा केंद्रीय बैंक निपटान कार्यों के अलावा समाशोधनगृह या प्रसंस्करण केंद्रों का नियमन भी करता है।

विकास कार्य

3.93 विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों पर भारी जिम्मेदारियाँ होती है; प्रथम, उन पर वर्तमान बाज़ार हालातों का बंधन होता है। दूसरे, वित्तीय क्षेत्र का नेता होने के कारण उन्हें लगातार अर्थव्यवस्था की परिवर्तनशील संरचना के अनुरूप अपनी नीतियों का अनुकूलन करना पड़ता है तथा विकास को प्रोत्साहित करने के लिए वित्तीय संरचना में भी परिवर्तन करना पड़ता है (सेयर्स 1961; चंदावरकर, 1996)। परंपरागत कार्यों की उपेक्षा न करते हुए केंद्रीय बैंक को ये कार्य करने चाहिए (ब्रिमर, 1971)। यह केंद्रीय बैंक के कार्यों एवं लक्ष्यों को अधिक विस्तृत एवं चुनौतीपूर्ण बनाता है।

क्षेत्रीय नीतियां

3.94 जब विकासशील देशों ने अपनी विकास यात्रा शुरू की तब उनके समक्ष अनेक बाधाएं आईं। उनके बाज़ार अविकसित एवं उनके उपकरण भोथरे थे; तथा उनकी सरकारों के पास संसाधनों की कमी थी परंतु वे शीघ्र विकास के आकांक्षी थे। इन देशों के केंद्रीय बैंक भी मौद्रिक नीति के परिचालन के संप्रेषण माध्यमों के अभाव या दुर्बलता के कारण अपने कार्यों निष्पादन में विवश थे। इसे उन्हें वित्तीय प्रणाली के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग परिचालन करने पड़ते थे। विकासशील देशों को सार्वजनिक ऋण, सिक्का ढलाई लाभ राजस्व एवं स्फीति कर के माध्यम से अपनी संसाधनाभाव ग्रस्त सरकारों की सहायता करनी पड़ती थी। प्रतिभूतियों के संस्थागत धारण के सांविधिक प्रावधानों द्वारा सार्वजनिक ऋण प्रायः आबद्ध बाज़ार में बेचा जाता है। इन प्रणालियों में केंद्रीय बैंकों द्वारा प्राय: विभिन्न उद्देश्यों एवं उधारकर्ता की आवश्यकताओं एवं सरकारी नीतियों के अनुरूप विभेदक ब्याज दरें निश्चित की जाती हैं। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंक की नीतियों का सरकार के विकास लक्ष्यों के साथ ताल-मेल बिठाना अत्यावश्यक है। इस उद्देश्य के लिए बैंक प्राय: कुछ राजकोषवत् विकास एवं प्रोत्साहन कार्य करते हैं। उदाहरणार्थ सरकार के विकास प्रयासों में सहायता देने के लिए केंद्रीय बैंक चयनित ऋण नीतियों यथा - ऋण का सूक्ष्म आबंटन, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को ऋणानुदान का क्रियान्वयन करता है। परंतु सब अनुदान आधारित राजकोषवत् नियमन बाज़ार को विकृत करते हैं तथा वित्तीय दमन के बीज बोते हैं। केंद्रीय बैंकों द्वारा ऐसी विवेकाधिकार सहायता प्राय: पुनर्वित्त के माध्यम से दी जाती है परंतु इससे मुद्रा आधार में वृद्धि एवं ऋण गुणक की समस्या पैदा होती है तथा ये मुद्रा प्रबंध के कार्य को जटिल बनाते हैं। इस राज्य निदेशित आर्थिक प्रबंधन द्वारा सरकार एवं सार्वजनिक उपक्रम लगातार ऋण प्रवाह के बड़े हिस्से को समेट निजी उद्यम को ऋण बाज़ार से बाहर धकेल देते हैं (मीक,1991)। इसके अलावा अनर्जक आस्तियों में वृद्धि करके ये राजकोषवत नीतियां वाणिज्यिक बैंकों के तुलन पत्रों पर दुष्प्रभाव डाल सकती हैं।

वित्तीय बाजारों का विकास

3.95 वित्तीय बाज़ारों में प्राय: मुद्रा बाज़ार, बाँड बाज़ार, विदेशी मुद्रा बाज़ार एवं पूंजी बाज़ार का समावेश होता है। मुद्रा नीति परिचालन की अपनी भूमिका के निर्वहन में केंद्रीय बैंक एक उपकरण शृंखला का प्रयोग करता है जो बाज़ार को प्रभावित करते हैं। अपने संप्रेषण के लिए मौद्रिक नीति वित्त बाज़ारों पर निर्भर करती है अतः उनका विकास एक अच्छी मौद्रिक नीति का समर्थनकारी कारक है। बदले में, मौद्रिक नीति उपकरण (मुख्यतः ब्याज दरें) वित्तीय बाज़ारों पर भारी प्रभाव डालते हैं।

3.96 अर्थव्यवस्था की वित्तीय संरचना पर मौद्रिक नीति की निर्भरता के कारण विकासशील देशों के केंद्रीय बैंक मुद्रा एवं ऋण की आपूर्ति एवं लागत के स्थूल प्रबंध के बारे में चिंतित रहते हैं। वित्तीय क्षेत्र की समस्याओं के समाधान हेतु विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों को अनौपचारिक ऋण प्रणाली का निर्मूलन कर संगठित ऋण प्रणाली के प्रसार हेतु विशिष्ट प्रयास करने पड़ते हैं। बचतों के संग्रहण एवं वर्तमान सूदखोर ऋणों की जगह पर्याप्त औपचारिक ऋण उपलब्धता सुनिश्चित करने में वाणिज्यिक बैंकों के नेटवर्क का विस्तार बहुत सहायक सिद्ध होता है। विकासशील देशों में प्राय: घटित होने वाली बाज़ार असफलता के समाधान के लिए निक्षेप बीमा एवं प्रत्यय गारंटी योजना चालू करनी पड़ी। ऐसी योजनाओं से नैतिक जोखिम की समस्या उत्पन्न होती है क्योंकि इसके कारण बैंकों में अनावश्यक जोखिम लेने की प्रवृति को प्रोत्साहन मिल सकता था तथा वे समुचित समीक्षा के बगैर ऋण दे सकते हैं। केंद्रीय बैंक विकासशील देशों में वित्तीय क्षेत्र की दक्षता सुनिश्चित करने हेतु कठिन प्रयास करते हैं। वित्तीय आधारभूत संरचना की रूपरेखा निर्माण एवं बाज़ार अनुशासन के लिए समुचित विनियम बनाने में भी प्रायः केंद्रीय बैंकों की भूमिका होती है। उनको 'खेल के नियम' अथवा संगत विनियामक एवं पर्यवेक्षी संरचना स्थापित करने एवं वित्तीय क्षेत्र में विकास के अनुसार उसमें सुधार करते रहने की जरुरत पड़ती है।

3.97 हाल के वर्षों में मौद्रिक नीति के कार्यान्वयन के लिए मौद्रिक प्राधिकारी उत्तरोत्तर बाज़ार आधारित उपकरणों का प्रयोग करते हैं। इससे वित्तीय बाज़ारों के विकास को प्रोत्साहन मिलता है। वित्तीय बाजारों को अंतरराष्ट्रीय सर्वश्रेष्ठ मानकों के अनुरूप बनाने का लक्ष्य उनके सुधार एवं विकास में उत्प्रेरक होता है। जैसा कि पूर्व एशियाई संकट से ज्ञात हुआ, संकट के समय व्यवधानों एवं झटकों को सहन करने के लिए सुविकसित वित्तीय बाज़ारों का अस्तित्व आवश्यक है।

3.98 सूचना, लेनदेन एवं निगरानी लागतों में कमी करके मध्यस्थता दक्षता को बढ़ाने के लिए केंद्रीय बैंक वित्तीय बाज़ारों के विकास को प्रोत्साहन देते हैं। दक्ष एवं सुविकसित वित्तीय प्रणाली बाज़ार आधारित उत्प्रेरणों के माध्यम से निम्नतर समष्टिगत अस्थिरता, ज्यादा स्थायी निवेश वित्त, उच्चतर आर्थिक वृद्धि एवं ज्यादा वित्तीय स्थिरता में योगदान देती हैं (कराचाडाग एवं अन्य, 2003)। वित्तीय विकास से नए उद्योगों के लिए निधि उपलब्धता बढ़ती है जिससे बचतों में वृद्धि होती है तथा विवेकाधिकार ऋणाबंटन की आवश्यकता में कमी होती है (चो, 1986; मैक्किन्नन, 1993; फ्राई, 1995)। स्थानीय वित्तीय बाज़ारों के विकास से मुद्रा एवं परिपक्वता अवधि की बेमेलता से उत्पन्न खतरे सहित, विदेशी मुद्रा पर अत्यधिक निर्भरता से उत्पन्न खतरे कम होते हैं (प्रसाद एवं अन्य, 2003)।

उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं में स्थानीय मुद्रांकित लिखतों के माध्यम से विदेशी निवेश आकर्षित करके मजबूत बाजार बाह्य वित्त पोषण का एक वैकल्पिक स्रोत उपलब्ध करते हैं (बीआइएस 2001)।

3.99 घरेलू वित्तीय बाजार के विकास से वित्तीय स्थिरता को प्रोत्साहन मिलता है। घरेलू बाजार के विकास से स्थानीय मुद्रांकित दीर्घावधि ऋण जारी करने में सुविधा मिल सकती है, तथा इस संरचना से बाह्य झटकों की तीव्रता में कमी आती है। एक गहनतर वित्तीय बाजार से हेजिंग उपकरणों, जो जोखिम के प्रभाव को कर सकते हैं, के विकास को प्रोत्साहन मिलता है।

3.100 नियंत्रण के युग से विरासत में मिली संस्था संरचनाएं प्रायः बाजार चालित पर्यावरण के अनुकूल नहीं होती। इसके अलावा, संरचना शीघ्र सुधार के लायक नहीं होती (टर्नर एवं टी डेक, 1996)। बाजार विकास में बाधक संस्था संरचना के चार चिह्नित सामान्य तत्व ये हैंः नियमन पर अत्यधिक निर्भरता, क्षीण एवं अल्पाधिकारी वित्तीय बाजार, अस्वस्थ बैंकिंग प्रणाली एवं अत्यधिक कर। कई देशों में वर्तमान वित्तीय बाजारों का सापेक्ष लघु आकार केंद्रीय बैंकों को गहनता (लेनदेन का परिमाण) एवं विस्तार (वित्तीय बाजारों की विविधता) में एक को चुनने को विवश करता है। मौद्रिक प्राधिकारी बाजार निर्माण के लिए सक्रिय प्रयास करती है जो उनके मौद्रिक नीति लक्ष्यों के विपरीत भी हो सकता है। अल्पाधिकारी प्रवृत्तियों ने बाजार निर्माण में बाधा डाली है। जोर्डन, आइस लैण्ड, फिनलैण्ड, जमैका एवं माल्टा आदि देशों ने मुद्रा बाजार की स्थापना के समय ऐसी समस्याओं का सामना किया। (टर्नर एवं टी डैक 1996)। अनर्जक आस्तियों का उच्चस्तर, आस्तियों एवं देनदारियों में मुद्रा परिपक्वता अवधि की बेमेलता एवं हानिकारक संरचना के दुर्लक्षणों से ग्रस्त बैंकिंग प्रणाली मौद्रिक नीति निर्माण के कार्य को कठिन बना सकते हैं क्यों कि बैंक मुद्रा बाजार के प्रमुख सहभागी हैं तथा ब्याज दरों में परिवर्तन उनके तुलन पत्रों पर भारी प्रभाव डालते हैं।

3.101 विकासशील बाजारों में, जहाँ वाणिज्यिक बैंकों का आधिपत्य होता है, प्रतिस्पर्धात्मक बैंकिंग संरचना के साथ-साथ विवेकसम्मत एवं नियामक संरचना के सृजन हेतु बैंकिंग प्रणाली में सुधार करने पड़ते हैं। पूर्व एशियाई वित्तीय संकट, जिसकी शुरूआत आवश्यक रुप से सुदृढ़ बैंकिंग संरचना एवं गहन प्रतिभूति बाजार के प्रभाव से हुई, वित्तीय बाजार विकास, विशेषतया, प्रतिभूति बाजार के महत्व का आभास बढा है। अब उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय बाजार स्थिरता के सृजन हेतु सर्वानुकूल नीतियों एवं संरचनाओं की बेहतर समझ है एवं अंतरराष्ट्रीय संस्था पर्यावरण में से ऐसी नीति के क्रियान्वयन को सहायता मिली है (मेयर 2001)।

3.102 चूंकि केंद्रीय बैंक शीर्ष वित्तीय संस्था होते हैं अतः वे प्रायः वित्तीय बाजार विकास को प्रोत्साहन देते हैं, वित्तीय क्षेत्र सुधारों का निदेशन करते हैं तथा अंतरराष्ट्रीय मानकों का पालन सुनिश्चित करते हैं।विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों के समक्ष ज्यादा व्यापक लक्ष्य होते हैं तथा वे अपनी जिम्मेदारियों के निर्वाह हेतु, विशेषकर शुरू में, प्रायः दखल अंदाजी पूर्ण एवं चयनित नीतियों का पालन करते हैं। विकसित देशों के विपरीत, जहां वित्तीय क्षेत्र सुधार मुख्य धारा के प्रयासों से हुए, अनेक विकासशील देशों में ये सुधार विशिष्टतया केंद्रीय बैंकों द्वारा प्रारंभ किए गए। अधिकांश विकासशील देशों में सुधार एक घटना न होकर क्रमिक प्रक्रिया होते हैं; उनका दशकों में विस्तार होता है तथा कई कदमों, जिनमें विनियमन एवं सख्त अनुशासन से उत्पन्न वित्तीय दमन का अर्थव्यवस्था से लोपन सबसे महत्वपूर्ण कदम है, का समावेश होता है। बाजार निर्माण के सतत प्रयासों एवं व्यवहार्य स्पर्धात्मक वित्तीय प्रणाली को प्रोत्साहित करने की लगातार कोशिशों से ही उदारीकरण एवं बाजार अभिमुख प्रणाली की ओर गति संभव है। विकासशील देशों में सुधारों की, प्रत्येक कदम के समेकन के बाद,निगरानी की आवश्यकता होती है।

3.103 विकासशील देशों में विकास ऋण आबंटित करने वाली वित्तीय संस्थाओं के सृजन में केंद्रीय बैंकों ने अग्रणी भूमिका निभाई है। पहले बैंकिंग प्रणाली का विकास एवं तदुपरांत उसका विनियमन इन बैंकों का सर्वप्रमुख कार्य रहा (सेयर्स, 1961)। इस विकासपरक भूमिका के कारण यह आवश्यकता होती थी कि केंद्रीय बैंक संस्थाओं एवं लिखतों के प्रोत्साहन के लिए भी प्रयास करें। विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा संस्था निर्माण के विशिष्ट उदाहरण मौजूद हैं। उदाहरण के तौर पर, बैंक आफ इंग्लैंड ने दमित उद्योगों के पुनर्वास हेतु दीर्घावधि ऋण उपलब्ध कराने हेतु पुनर्निर्माण वित्त निगम (आरइसी) जैसी विशेषीकृत संस्थाओं के सृजन में पहल की। भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी ऐसी कई संस्थाओं जैसे निवर्तमान भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (आइडीबीआइ) एवं राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना के लिए पहल की (अध्याय IV एवं VI देखें)। अतिरिक्त कार्य करने के लिए केंद्रीय बैंकों को समर्थकारी सांविधिक प्रावधानों की आवश्यकता होती है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि सन 1970 एवं 1980 के दशक में अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष की तकनीकी सहायता से भूटान, बोत्स्वाना, फीजी, मालदीव एवं स्वाजीलैण्ड में नव स्थापित केंद्रीय बैंकों तथा मौद्रिक प्राधिकारियों से संबंधित कानूनों में प्रोत्साहन भूमिका के लिए कई सक्षमकारी प्रावधान थे।

नीति उन्मुख अनुसंधान

3.104 विश्व के प्रत्येक प्रमुख बैंक में एक अनुसंधान विभाग होता है। वास्तव में कुकिरमेन (1992) के शब्दों में ''राजकोष एवं सरकार

की अन्य शाखाओं की अपेक्षा निरपेक्ष एवं सापेक्ष तौर पर सुदृढ़ अनुसंधान विभाग की सहायता प्राप्त गवर्नर की बातों में ज्यादा वजन होता है''। इसका प्रमुख कारण यह है कि गवर्नर को अर्थव्यवस्था के बारे में सूचना देनेवाला सापेक्षतया निरपेक्ष स्रोत माना जाता है। बैंक के अनुसंधान विभाग द्वारा प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट की गुणवत्ता शायद विभाग की गुणवत्ता का संकेतक हो सकती है।

3.105 आंतरिक अनुसंधान का कार्य केंद्रीय बैंक परिचालनों की रीढ़ की हड्डी है। क्योंकि अनुसंधान विभाग द्वारा माडलिंग अभ्यासों, भूतकाल प्रवृत्तियों एवं भविष्य की प्रत्याशाओं, विश्लेषण एवं निष्कर्षों संबंधी अध्ययन के परिणामों के आधार पर ही मौद्रिक एवं बाह्य क्षेत्र परिचालनों के समय दिशा एवं सघनता का निर्धारण किया जाता है। जैसा कि गुडफ्रेंड एवं अन्य (2004) ने उल्लेख किया है ''नीति आकलन के लिए माडलों का सर्वश्रेष्ठ सृजन आंतरिक तौर पर ही किया जा सकता है क्योंकि अर्थशास्त्रीय स्टाफ नीति निर्माण प्रक्रिया से परिचित होता है, उनके पास प्रासंगिक संस्थागत ज्ञान होता है एवं उनको कार्य को विश्वसनीयता एवं पूर्णतया करने की उत्प्रेरणा होती है।''

सूचना का प्रसार

3.106 विकासशील देशों के पास प्राय: खराब डाटा बेस होता है। तदनुसार स्थूल आर्थिक अनुसंधान को सुगम बनाने के लिए केंद्रीय बैंक प्राय: डाटा बेस निर्माण का कार्य स्वयं करते हैं। क्रेडिट कार्ड कंपनियों, औपचारिक एवं अनौपचारिक वित्त संस्थाओं सहित बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्र की निगरानी, तथा बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्र के उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के अलावा विकासशील देशों के केंद्रीय बैंक देशी वाणिज्यिक बैंकों को आंकड़ों के प्रसार एवं सूचना के आदान-प्रदान के बेहतर व्यवहार को लागू करने में सहायता करते हैं।

3.107 इन विशिष्ट मामलों के परे, संस्थाओं के रुप में केंद्रीय बैंकों के अपने देशों के वित्तीय प्रणालियों, आर्थिक माध्यमों तथा सामान्यजन के प्रति बृहत्तर उत्तरदायित्व हैं। जब कुछ आर्थिक माध्यम अन्य की अपेक्षा ज्यादा सूचना रखते हों तो उनके मध्य समतल क्रीड़ा क्षेत्र का अभाव होता है। सूचना तक पहुंच एवं उसकी व्याख्या करने की विशेषज्ञता के असमान स्तरों से उत्पन्न होने वाली सूचना विषमता की स्थिति के निवारण हेतु केंद्रीय बैंक अपने प्रकाशनों एवं वेबसाइट द्वारा सूचना का प्रसार करता है। सूचना की उपलब्धता द्वारा यह एक सार्वजनिक माल की आपूर्ति करता है। कई देशों में ग्राहकों की धोखे से रक्षा हेतु बैंकिंग एवं गैर-बैंकिंग संस्थाओं से संबंधित विस्तृत सूचना एवं अर्थव्यवस्था की स्थिति के विश्लेषण के प्रचार के लिए विशेष प्रयास किए जाते हैं। इस संदर्भ में वित्तीय समावेशन में केंद्रीय बैंक की संगत भूमिका होती है। लीलाधर (2005) ने वित्तीय समावेशन को इस प्रकार परिभाषित किया है ''प्रतिकूल परिस्थितियों से ग्रस्त एवं कम आमदनी वाले बृहत् जनसमुदाय को कम कीमत पर बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराना। सार्वजनिक माल की अबाधित उपलब्धता एक मुक्त एवं सक्षम समाज की आवश्यक शर्त है।''

समन्वय एवं सहयोग

3.108 विकासशील देशों में केंद्रीय बैंक प्राय: देश का बाह्य वित्तीय संबंधों का माध्यम होता है। देश की ओर से अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (आइएमएफ), अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) एशियाई विकास बैंक (एडीबी) जैसी संस्थाओं के साथ वार्ता एवं व्यवहार में, सरकार के साथ-साथ केंद्रीय बैंक भी शामिल होता है। इसके अलावा केंद्रीय बैंक वाणिज्यिक बैंकों में निगम सुशासन को प्रोत्साहित करने तथा देश की बैंकिंग प्रणाली द्वारा अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं जैसे बीआइएस द्वारा निर्धारित अंतरराष्ट्रीय नियमों का पालन सुनिश्चित करने का प्रयास करता है। इस विषय पर बासल समिति ने भी कुछ अति महत्वपूर्ण सिद्धांत स्थापित किए हैं। केंद्रीय बैंकर सरकारी अधिकारियों के साथ घनिष्ठतापूर्वक कार्य करते हैं तथा सक्रिय सुधार लाने या अपनी सरकार को सलाह देने की स्थिति में होते हें (चंदावरकर 1996)।

3.109 हाल के वर्षों में वित्तीय बाजारों के वैश्वीकरण एवं तदनुरुपी समेकन से छूत के फैलने की नई राहें खुली है एवं सीमित एकपक्षीय निर्णय की दृष्टि से प्रणालीगत जोखिमों का प्रबंध लगातार कठिन होता जा रहा है। इसके लिए एक प्रभावकारी पर्यवेक्षण प्रणाली तथा नियमों के बीच लगातार ज्यादा समन्वय की आवश्यकता है। केंद्रीय बैंकों के बीच अंतरराष्ट्रीय समन्वय स्थापना के प्रथम औपचारिक प्रयास 17 मई 1930 को अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक की स्थापना के साथ किए गए। अ.नि. बैंक एक अंतरराष्ट्रीय संस्था हैं जो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मौद्रिक एवं वित्तीय सहकार को प्रोत्साहन देता है तथा केंद्रीय बैंकरों के बैंकर की भूमिका निभाता है। केंद्रीय बैंकों के बीच एवं अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बिरादरी में चर्चा एवं विश्लेषण को प्रोत्साहन देने वाले मंच के रूप में कार्य करना, आर्थिक एवं मौद्रिक अनुसंधान केंद्र की भूमिका निभाना, केंद्रीय बैंकों के वित्तीय लेनदेन में प्रतिपक्षी की भूमिका निभाना तथा अंतरराष्ट्रीय परिचालनों में एक माध्यम या ट्रस्टी की भूमिका निभाना अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक के मुख्य उद्देश्य हैं। मौद्रिक एवं वित्तीय स्थिरता को प्रोत्साहन देना अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक के प्रमुख लक्ष्यों में से एक है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक में स्थापित समितियां जैसे - बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासल समिति, वैश्विक वित्तीय प्रणाली समिति, भुगतान एवं निपटान समिति एवं बाजार समिति

- पृष्ठभूमि विश्लेषण एवं नीति संबंधी अनुशंसा द्वारा केंद्रीय बैंकों की मदद करती है।

3.110 केंद्रीय बैंकों के बीच सहयोग के दूसरे उल्लेखनीय प्रयासों में ब्रेटन वुड्स व्यवस्था (1944) शामिल है। अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक की स्थापना सन् 1945 में प्रमुखतया एक स्थिर अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली के अनुरक्षण एवं अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक सहयोग के उद्देश्यों से की गई थी। इन अंतरराष्ट्रीय प्रयासों के अतिरिक्त केंद्रीय बैंकों में क्षेत्रीय आधार पर भी सहयोग स्थापित करने के प्रयास किए गए। सन् 1998 में यूरोपीय केंद्रीय बैंक (इसीबी) की स्थापना इसका बड़ा उदाहरण है। यू. के. बैंक यूरो क्षेत्र का केंद्रीय बैंक है तथा वह यूरो मुद्रा के प्रचलन वाले बारह राष्ट्रों की मुद्रा नीति का प्रभारी है।

3.111 दक्षिण एशिया में प्रशिक्षण सहित मत एवं अनुभव विनिमय के मंच के रुप में सन् 1998 में सार्क फाइनेंस की स्थापना की गई। एशिया के केंद्रीय बैंक गवर्नरों के बीच घनिष्ठ एवं नियमित वार्तालाप से सहयोग प्रक्रिया को बल मिलना चाहिए (रेड्डी, 2005)।

III. केंद्रीय बैंकिंग के समसामायिक विषय / मुद्दे

केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता

3.112 विकास यात्रा में जहां केंद्रीय बैंकों की गतिविधियों का दायरा बढ़ा है वहीं उनकी स्वायत्तता के प्रति दृष्टिकोण में भी दिलचस्प मोड़ आए हैं। प्रथम विश्वयुद्ध से पहले अधिकांश देशों के केंद्रीय बैंक निजी निकाय थे तथा औपचारिक तौर पर सरकार के अधीन नहीं थे। लगभग द्वितीय विश्व युद्ध के समय स्थिति बदली एवं कई देशों (उदाहरणार्थ - जर्मनी, फ्रांस, इग्लैंड, जापान, इटली एवं स्वीडन) में केंद्रीय बैंकों को सरकार के नियंत्रणाधीन लाया गया। हाल के वर्षों में इस प्रवृत्ति का उलट हो रहा है। सरकारें अपने केंद्रीय बैंकों को विशेषकर इस अनुभवजन्य प्रमाण कि यदि केंद्रीय बैंक स्वतंत्र हो तो मुद्रास्फीति की दर कम रहती है, अधिक स्वायत्तता देना शुरू किया है (होल्ट फ्रेरिक एवं रीस - 1999)।

3.113 बीसवीं सदी के अंतिम दशक में केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता में भारी वृद्धि देखी गई तथा केंद्रीय बैंक मौद्रिक नीति के निर्माण के लिए पूरी तरह स्वतंत्र बनाए गए। ये परिवर्तन शनैःशनैः आए तथा प्रत्येक संकट के पश्चात् अपनी स्वतंत्रता की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए बैंकों ने अपनी भूमिका का विस्तार किया। इस संबंध में वर्ष 1998 अति महत्वपूर्ण है। बैंक आफ इग्लैंड, जो अठारहवीं एवं उन्नीसवीं शताब्दी में भी काफी हद तक स्वतंत्र था, को जून 1998 में वैधानिक तौर पर स्वतंत्र निकाय बनाया गया। बैंक आफ जापान को अप्रैल 1998 में परिचालन की स्वतंत्रता मिली हालांकि उसे वैधानिक स्वतंत्रता नहीं दी गई। अपने अति राष्ट्रीय प्रकृति के कारण जून 1998 में स्थापित यू.के. बैंक दुनिया का सबसे स्वतंत्र केंद्रीय बैंक है।

3.114 साहित्य में केंद्रीय बैंक स्वायत्तता के औचित्य पर विषद चर्चा की गई है। प्रथम - एक केंद्रीय बैंक दीर्घ समय क्षितिज के आधार पर कार्य करता है तथा उसके ज्यादा विवेक सम्मत दीर्घावधि दृष्टिकोण अपनाने की संभावना ज्यादा है। दूसरे, राजकोषीय नीति के प्राथमिक लक्ष्यों एवं मौद्रिक नीति लक्ष्यों में टकराव हो सकता है। उदाहरण के तौर पर सरकार की यह इच्छा हो सकती है कि ब्याज भुगतान कम रहें जबकि मौद्रिक प्राधिकारी मूल्य स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए ब्याज दर में परिवर्तन चाहे। एक स्वायत्त केंद्रीय बैंक इस समस्या का हल निकालने की बेहत्तर स्थिति में होगा। तीसरे, अविकसित ऋण बाजार वाले देशों में पर्याप्त स्वायत्तता के अभाव में नये नोट छापकर बजट घाटे को पूरा करने के लिए केंद्रीय बैंकों को विवश किया जा सकता है (मेयर, 2000)।

3.115 केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता के समर्थक तर्क कम वांछनीय हैं,जहां राजनैतिक प्रणाली लघु अवधि दृष्टिकोण से कार्य करती है तथा दीर्घावधि लागत को कम आंक कर लघु अवधि लाभ के लिए स्फीतिकारक नीतियां अपनाती है। मूल्य स्थिरता के लिए उत्तरदायी स्वतंत्र केंद्रीय बैंक इस स्फीति समर्थक प्रवृत्ति का निवारण कर सकता है (फिशर, 1996)। सामान्यतः यह विश्वास किया जाता है कि यह दृष्टिकोण कि मोटे तौर पर केंद्रीय बैंक राजनैतिक शक्ति से आज़ाद रहे, का उद्भव बीसवीं सदी में ही हुआ प्रथम विश्व युद्ध के दौरान उत्पन्न घाटे के वित्तपोषण के संकट, जिसने कई राष्ट्रों को अपने शिकंजे में लिया, के अनुभव के प्रकाश में, लीग आफ नेशंस द्वारा आयोजित एक सम्मेलन श्रृंखला में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बिरादरी ने इस सिद्धान्त को पहचाना कि केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता से मूल्य स्थिरता में सहयोग मिलता है। केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता में दिलचस्पी के पुनर्जागरण से कई कारकों पर ध्यान जाता है जैसे :- केंद्रित योजना अर्थव्यवस्थाएं, नई यूरोपीय केंद्रीय बैंकिंग व्यवस्थाओं की स्थापना एवं भारी सीमा पार वित्तीय प्रवाह की सुविधा वाले विश्व में मूल्य स्थिरता का महत्व।

3.116 केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता तीन प्रमुख कारणों पर निर्भर करती है : कार्मिक मामलों में स्वायत्तता, वित्तीय मामलों में स्वायत्तता एवं नीति परिचालन में स्वायत्तता। कार्मिक स्वायत्तता का आशय वरिष्ठ पदाधिकारियों की नियुक्ति, उनकी कार्यावधि, तथा शीर्ष केंद्रीय बैंक अधिकारियों एवं शासक बोर्ड की बर्खास्तगी प्रक्रिया में सरकारी हस्तक्षेप के अभाव से है। पूर्व निश्चित एवं पारदर्शी नियोजन एवं पदच्युति प्रक्रियाओं से केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता में वृद्धि होती है। कुछ देशों में

ऐसे तंत्र वर्तमान हैं जो नियुक्ति प्रक्रिया में बृहद् राजनैतिक हितों की रक्षा का ध्यान रखते हैं। अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक द्वारा किए गए सर्वेक्षण में यह पाया गया कि कम से कम दो तिहाई केंद्रीय बैंकों के मामले में प्रत्याशी के नामांकन एवं नियुक्ति प्रक्रिया में न्यूनतम दो या उससे अधिक राजनैतिक निकाय शामिल थे जिससे यह प्रक्रिया कम विवेकाधिकार आधारित बनी एवं केंद्रीय बैंक अधिक स्वायत्त उदाहरण के तौर पर राष्ट्रपति द्वारा फेडरल रिज़र्व प्रणाली के अध्यक्ष के लिए नाम प्रस्तावित करने के बाद उसे अमेरिकी कांग्रेस की स्वीकृति भी मिलनी चाहिए।

3.117 वित्तीय स्वायत्तता का मतलब है कि केंद्रीय बैंक के पास यह निर्णयाधिकार होना चाहिए कि सरकारी खर्च के किस अंश का वित्तपोषण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से केंद्रीय बैंक द्वारा किया जाएगा (रेड्डी 2001)। घाटे के स्वतः मुद्रीकरण से मौद्रिक नीति राजकोषीय नीति के अधीन आ जाती है। इस परिदृश्य में यह देखा गया है कि यदि केंद्रीय बैंक का अलग बजट हो तो वह अधिक स्वतंत्र होता है। इस स्थिति में केंद्रीय बैंक के पास अपने कारोबार को चलाने के लिए पर्याप्त संसाधन होते हैं तथा उसे सरकारी स्वीकृति की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती।

3.118 नीति स्वायत्तता का आशय, मौद्रिक नीति के निर्माण एवं परिचालन में केंद्रीय बैंक को दी गई स्वतंत्रता से है। परिचालन स्वतंत्रता के दो भेद यानि लक्ष्य स्वतंत्रता एवं उपकरण स्वतंत्रता हैं। लक्ष्य स्वतंत्रता का अर्थ यह है कि बैंक परस्पर विरोधी लक्ष्यों जैसे - पूर्ण रोजगार एवं निम्न मुद्रास्फीति में से किसी भी समय किसी को भी चुन सकता है। उपकरण स्वाधीनता का आशय यह कि केंद्रीय बैंक पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कोई भी उपकरण प्रयोग करने की स्वतंत्रता रखता है। अधिकांश केंद्रीय बैंक सांविधिक आदेशों के अधीन कार्य करते हैं अतः उनके पास लक्ष्य स्वतंत्रता नहीं होती क्योंकि लक्ष्यों का निर्धारण विधि द्वारा किया जाता है। विभिन्न देशों में केंद्रीय बैंकों को आदेशित लक्ष्यों की स्पष्टता में अंतर होता है अतः मौद्रिक नीति के परिचालन का स्वतंत्रता स्तर भी अलग-अलग होता है।

3.119 एक संस्था के स्वामित्व का अत्यधिक महत्व है क्योंकि यह उसका परिचालन निर्धारित करता है। यह देखा गया है कि यदि केंद्रीय बैंक को परिचालन स्वतंत्रता प्राप्त है तो उसके स्वामित्व से उसके परिचालन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सारी दुनिया में केंद्रीय बैंक समय के साथ अधिक परिचालन स्वतंत्रता की ओर बढ़ रहे हैं। कुछ केंद्रीय बैंकों, जैसे बुंडेस बैंक, की रूपरेखा में ही स्वतंत्रता निहित थी। विशेष प्रावधानों से बुंडेस बैंक की स्वतंत्रता सुनिश्चित की गई परंतु बैंक को यह उत्तरदायित्व भी दिया गया कि वह सरकार की आर्थिक नीतियों का समर्थन करें। यह आशा की जा सकती है कि ऐसे केंद्रीय बैंक अपनी भूमिका बेहतर ढ़ंग से निभाएंगे क्योंकि उनको राजनैतिक दबावों से बेहतर सुरक्षा मिली है।

3.120 केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता के आर्थिक प्रभावों के मूल्यांकन के लिए कई अध्ययन किए गए हैं। ये अध्ययन आर्थिक प्रभावों के अनुमान का आकलन करने से पहले केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता के मात्रात्मक मापक परिभाषित करते हैं तदुपरांत इन मापकों एवं औसत मुद्रास्फीति, मुद्रास्फीति परिवर्तनशीलता एवं वास्तविक आर्थिक विकास के पारस्परिक संबंधों का अनुमान लगाते हैं। परंतु उन कारकों, जिन पर विचार किया गया, सहित सूचकांक की रूपरेखा, उनका भार एवं उन्हें नियमबद्ध करने की प्रक्रिया परिणामों को प्रभावित करते हैं (मंगानो, 1998)। इसके बावजूद सन 1970 के दशक के शुरू में नियत सममूल्य की ब्रेटन वुड प्रणाली के बिखर जाने के बाद की अवधि में जिन देशों ने अपने केंद्रीय बैंकों को अधिक विधिक स्वतंत्रता दी उनको निम्नतर मुद्रास्फीति दर का सामना करना पड़ा (ग्रिली एवं अन्य, 1991)। इन देशों से प्राप्त प्रमाण से केंद्रीय बैंकों को ज्यादा स्वायत्तता देने के तर्क को बल मिला क्योंकि यह पाया गया कि ज्यादा स्वाधीनता से औसत वास्तविक विकास को कोई नुकसान नहीं होता (एलसीना एवं समर्स, 1993)। परंतु 1990 के दशक में निम्न मुद्रास्फीति दर एवं मुद्रास्फीति को निचले स्तर पर बनाए रखने हेतु बढ़ते हुए राजनैतिक दबाव की पृष्ठभूमि में केंद्रीय बैंक की अधिक स्वायत्तता एवं निम्न मुद्रास्फीति के बीच कोई सम्बंध स्थापित करना कठिन हो गया (लेबेक, 2004)।

3.121 हैयो एवं हैफकर का यह तर्क है कि मौद्रिक स्थिरता के लिए केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता न तो आवश्यक तथा ना ही पर्याप्त शर्त है। प्रथम, स्वतंत्रता मुद्रा नीति की संभावित उपयोगी रूप रेखाओं में से एक है। दूसरे स्वतंत्रता को एक बाह्य परिवर्तनीय कारक के तौर पर नहीं लेना चाहिए बल्कि इस प्रश्न, कि केंद्रीय बैंकों को स्वतंत्रता क्यों दी जाती है, पर ध्यान देने की जरूरत है। केंद्रीय बैंकों को स्वतंत्रता विशिष्ट परिस्थितियों में दी जाती है, जिनका संबंध उनकी विधि, राजनैतिक एवं आर्थिक प्रणालियों से होता है। इस अध्ययन में भी स्वतंत्रता एवं निम्न मुद्रास्फीति दर में पारस्परिक संबंध पाया गया। परंतु लेखकों का यह मत है कि यदि केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता पर एक आंतरिक कारक के रूप में विचार किया जाए तो स्वाधीनता एवं निम्न मुद्रास्फीति दर के पारस्परिक संबंध के कारणों के बारे में कोई सूचना नहीं मिलती।

3.122 एक प्रभावशाली मत यह है कि देश का इतिहास एवं प्राथमिकताएं मुद्रास्फीति का निर्धारण करते हैं तथा कारणत्व का प्रवाह मुद्रास्फीति से संस्था संरचना की ओर होता है। इस मत के अनुसार एक मुद्रास्फीति के प्रति क्षमावान देश में सख्त मुद्रास्फीति विरोधी नीतियों सहित स्वतंत्र केंद्रीय बैंक के आरोपण के प्रयास असफल होने को शापित हैं। परन्तु न्यूजीलैण्ड जैसे देशों के अनुभव से इस मत की पुष्टि नहीं होती। सन 1988 से पूर्व रिज़र्व बैंक आफ न्यूजीलैण्ड आर्थिक सहयोग

एवं विकास संगठन के देशों के केंद्रीय बैंकों में सबसे कम स्वायत बैंकों में से एक था। सन् 1988 में इसको मुद्रास्फीति का मुकाबला करने का स्पष्ट आदेश एवं उच्च स्तर की स्वायत्तता मिली तो न्यूजीलैण्ड में मुद्रास्फीति की दर दहाई के आँकड़ों से गिरकर दो प्रतिशत के नीचे आ गई। इससे यह प्रतीत होता है कि मुद्रास्फीति के नियंत्रण के लिए मौद्रिक संस्थाओं की संरचना तथा मुद्रास्फीति का सामना करने का निश्चय होना चाहिए (म्बोवेनी, 2000)।

3.123 एक स्वतंत्र केंद्रीय बैंक ऐसी नीतियां लागू कर सकता है जो सरकारी नीतियों की विरोधी हैं। नीतिगत लक्ष्यों में ऐसी प्रतिकूलता से अर्थव्यवस्था-स्तर की समस्याएं पैदा हो सकती हैं। इससे समन्वित नीति दृष्टिकोण की वांछनीयता का बोध होता है। इसके विपरीत यह तर्क दिया जा सकता है कि जब तक केंद्रीय बैंक का लक्ष्य मुद्रास्फीति का नियंत्रण करना है - लघु अवधि में ऐसे टकराव अनिवार्य हैं। परंतु दीर्घावधि में, स्थायी वित्तीय परिस्थितियों से अंततः उच्चतर आर्थिक विकास दर, ज्यादा रोजगार एवं ज्यादा कल्याण की उपलब्धि होती है।

3.124 प्रजातांत्रिक औचित्य का अभाव केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता के विरुद्ध एक प्रमुख तर्क है, क्योंकि इससे ब्याज दर, विनिमय दर, वित्तीय प्रणाली की दक्षता तथा अन्य मौद्रिक मामलों से संबंधित निर्णयाधिकार अनिर्वाचित अधिकारियों के निकाय में निहित होते हैं। परंतु यह ध्यान में रखना चाहिए कि सबसे अधिक स्वायतः बैंक भी विधायिका के प्रति जवाबदेह होते हैं। इसके अलावा स्वतंत्रता का अर्थ संप्रेषण का अभाव नहीं है तथा अपनी नीतियों की सफलता के लिए बैंक पूर्ण स्वतंत्रता की बजाय सरकार के साथ संप्रेषण एवं समन्वय की नियमित प्रक्रिया को अधिमान दे सकता है।

3.125 केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता स्वयं में व्यापक समष्टिगत आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु एक उपकरण मात्र है। लक्ष्यों की पारदर्शिता, विधायिका के प्रति उत्तरदायित्व की कोई रूपरेखा एवं समय प्रतिकूलता समस्या के निवारण हेतु विश्वसनीयता आदि वास्तविक स्वतंत्रता की पूर्व शर्तें हैं।

एक केंद्रीय बैंक की जवाबदेही

3.126 उत्तरदायित्व का अर्थ मौद्रिक नीति कार्यों की जिम्मेदारी लेना है। स्वायत्तता एवं पारदर्शिता केंद्रीय बैंक के उत्तरदायित्व के साथ मिलकर अनुरक्षणीय आर्थिक विकास में सहायक मूल्य एवं वित्तीय क्षेत्र स्थिरता की प्राप्ति में सहायता देते हैं। मौद्रिक नीति के उत्तरदायित्व के कुछ मापक हैं। संसदीय निगरानी, मौद्रिक नीति समिति की बैठकों की कार्यवाही का प्रकाशन, मौद्रिक नीति रिपोर्टों का प्रकाशन एवं अभिभावी तंत्र की उपस्थिति के आधार पर ब्रायल्ट, हलदान एवं किंग (1996) ने चौदह राष्ट्रों के लिए उत्तरदायित्व सूचकांक का निर्माण किया। फाई एवं अन्य (2000) द्वारा सूचित उत्तरदायित्व सूचकांक विशिष्ट लक्ष्य एवं जनसामान्य के प्रति जवाबदेही के परिप्रेक्ष्य में उत्तरदायित्व पर ध्यान केंद्रित करता है। इन सभी उत्तरदायित्व सूचकांकों में पारदर्शिता एवं जिम्मेदारी का समावेश है।

3.127 एक मत यह है कि उत्तरदायित्व का अर्थ केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता के साथ समझौता करना है। केंद्रीय बैंक का उत्तरदायित्व एक ऐसा तंत्र है जिसके द्वारा जनतांत्रिक प्रणाली में जांच एवं संतुलन प्रणाली का सृजन किया जाता है। नोलन एवं स्केलिंग (1996) का मत है कि केंद्रीय बैंक के उत्तरदायित्व एवं स्वतंत्रता में महत्वपूर्ण ऋणात्मक संबंध है। परंतु डे हान (1997) इसकी काट करते हुए कहते हैं कि यह तर्क सार्वभौम रूप से लागू नहीं होता तथा उत्तरदायित्व के अंश पर आधारित है। यह तर्क भी दिया गया कि स्वतंत्रता एवं उत्तरदायित्व का अदला-बदली का लाभ ज्यादा दिन तक नहीं मिलता (एजाफिंजर एवं डि हान 1996)। लगातार व्यापक राजनैतिक समर्थन के बगैर अपनी नीति का परिचालन करने वाला केंद्रीय बैंक देर सबेर अभिभावित किया जाएगा। अमेरिकी फेड सबसे स्वतंत्र केंद्रीय बैंकों में से एक है परंतु इसकी स्वतंत्रता उत्तरदायित्व से सीमित होती है - इसके अध्यक्ष को समय-समय पर कांग्रेस के समक्ष वक्तव्य देना पड़ता है।

3.128 कभी-कभी यह तर्क दिया जाता है कि अंक रूप में स्पष्टतः वर्णित एकल लक्ष्य (सामान्यतः मूल्य स्थिरता) की स्थापना से केंद्रीय बैंक के उत्तरदायित्व निर्धारण में सहायता मिलती है। परंतु यह नोट करने लायक बात है कि अन्य महत्वपूर्ण लक्ष्यों यथा उत्पादन वृद्धि की कीमत पर मुद्रास्फीति लक्ष्य का निर्धारण करना शायद अवांछनीय हो। अन्य विचारणीय बात यह है कि अर्थव्यवस्था में अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ आ सकती हैं अतः गतिशील परिस्थितियों से उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु नम्यता एक महत्वपूर्ण सहायक सिद्ध हो सकती है। केंद्रीय बैंकर की पुनर्नियुक्ति प्रक्रिया भी उत्तरदायित्व निश्चित करने का एक माध्यम हो सकता है। लघु कार्यावधि की स्थिति में सरकार पुनर्नियुक्ति प्रक्रिया द्वारा अधिक मात्रा में नियंत्रण कर सकती है।

3.129 बिटर (1998) का मत है कि बैंक आज इंग्लैंड अधिनियम में स्वाधीनता एवं उत्तरदायित्व का सबसे अधिक प्रभावी संयोग किया गया है। यदि मुद्रास्फीति लक्ष्य की प्राप्ति में एक प्रतिशत से ज्यादा घटबढ़ हो जाती है तो मौद्रिक नीति समिति की ओर से गवर्नर वित्तमंत्री को पत्र लिखता है। पत्र में लक्ष्यांक से विपथन के कारणों, प्रस्तावित नीति प्रयासों तथा इन प्रयासों के प्रभाव दिखने तथा मुद्रास्फीति के बाधित स्तर पर आने में लगने वाले समय का वर्णन करना आवश्यक होता है।

सांझी जवाबदेही के अतिरिक्त मौद्रिक नीति समिति के सदस्य व्यक्तिगत तौर पर भी बैंक आफ इंग्लैंड के निदेशक मंडल के प्रति जवाबदेह एवं उत्तरदायी होते हैं। मौद्रिक नीति समिति नियमित रूप से त्रैमासिक आधार पर मुद्रास्फीति रिपोर्ट एवं मुद्रास्फीति भविष्यवाणी प्रकाशित करती है जिनसे मौद्रिक नीति संप्रेषण तंत्र एवं उभरती हुई आर्थिक परिस्थितियों के बारे में उसकी सोच एवं दृष्टिकोण का संकेत मिलता है।

3.130 उत्तरदायित्व निश्चित करने वाले तंत्रों के लिए केंद्रीय बैंक के निर्णयों, बजट एवं व्यय की समीक्षा की आवश्यकता होती है। बैंक के परिचालन एवं मौद्रिक नीति निर्माण प्रक्रिया में पारदर्शिता से इसकी जवाबदेही सुनिश्चित होती है। जितनी ज्यादा केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता होगी उतनी ज्यादा इस बात की आवश्यकता होगी केंद्रीय बैंक समुचित प्राधिकारी से अपने निर्णयों एवं नीतियों की समीक्षा करवाएं। जैसा कि पहले वर्णन किया गया - कई देशों में गवर्नर कांग्रेस या संसद के समक्ष वक्तव्य देता है। कई देशों में सरकार की बजाय सार्वजनिक तौर पर नियुक्त पर्यवेक्षी बोर्ड केंद्रीय बैंक के परिचालन बजट को स्वीकृति देता है परंतु कई देशों में सरकार बजट मामलों में हस्तक्षेप नहीं करती है। पर्यवेक्षी बोर्ड केंद्रीय बैंक के खातों की समीक्षा एवं केंद्रीय बैंक तथा इसके प्रबंध के कार्यनिष्पादन का मूल्यांकन करता है।

3.131 अपने महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों, मूल्यस्थिरता एवं वृद्धि की प्राप्ति में वर्तमान केंद्रीय बैंक स्वायतः एवं उत्तरदायी दोनों है। आजकल केंद्रीय बैंक ज्यादा मुक्त हैं तथा वे अपनी नीतियों एवं निर्णय प्रक्रिया का औचित्य प्रकट करते हैं। डाटा प्रसार संबंधित बीआइएस एवं आइएमएफ नियम भी केंद्रीय बैंकों की जिम्मेदारी बढ़ाने में योगदान देते हैं। केंद्रीय बैंक की वार्षिक रिपोर्टों मुद्रास्फीति रिपोर्ट, मुद्रानीति समिति की बैठकों के वृत्त का प्रकाशन उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने के महत्वपूर्ण तरीके हैं।

3.132 नाइट (2005) पारदर्शिता में वृद्धि के लिए तीन प्रकार के सर्वश्रेष्ठ व्यवहारों का हवाला देते है। अधिकारिक रिपोर्ट, जिसमें आर्थिक स्थितियों की विवेचना की गई हो; महत्वपूर्ण परिवर्तनशील कारकों के पूर्वानुमान एवं उनका केंद्रीय पूर्वानुमान एवं जोखिम तथा विचाराधीन आपात स्थितियों एवं केंद्रीय बैंक के निर्णयों की व्याख्या संबंधी रिपोर्ट का प्रकाशन। बाजार सहभागियों की प्रत्याशा को आधार देने, मौद्रिक नीति संकेतों के संप्रेषण एवं बाजार को मुद्रा नीति निर्णयों के अनुकूल बनाने के लिए ऐसे प्रयास आवश्यक है।

केंद्रीय बैंक के परिचालनों में पारदर्शिता

3.133 केंद्रीय बैंक पारदर्शिता को अनिश्चितता के निवारणार्थ मुद्रा नीति निर्माताओं एवं अन्य बाजार सहभागियों के बीच सूचना विषमता के अभाव के रूप में देखा जा सकता है। हाल की अनेक घटनाओं से पारदर्शिता की आवश्यकता का जन्म हुआ है। सूचना विषमता से उत्पन्न संकट, वित्तीय बाजारों का बढ़ता एकीकरण, केंद्रीय बैंकों की अधिक स्वायत्तता एवं उत्तरदायित्व की आवश्यकता तथा वित्तीय स्थिरता पर जोर आदि कारणों से केंद्रीय बैंकोंएवं बाजार सहभागियों द्वारा अधिक पारदर्शिता की आवश्यकता हुई है। बढ़ती हुए वैश्विक समष्टिगत आर्थिक विषमताओं से बाजार माध्यमों एवं नीति निर्माताओं के समक्ष अनिश्चितता बढ़ रही है। इस परिदृश्य में केंद्रीय बैंक अनिश्चितता से और वृद्धि नहीं कर सकते। इससे अधिक पारदर्शिता एवं बेहतर संप्रेषण की आवश्यकता पैदा होती है। मुद्रा नीति अर्थव्यवस्था एवं अंतरराष्ट्रीय संबंधों के विभिन्न दृष्टिकोणों से सुरक्षित सूचना के विश्लेषण की नाना प्रकार की दृष्टियों पर आधारित होनी चाहिए।

3.134 इस परिदृश्य में यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि पारदर्शिता नाना प्रकार से उत्तरदायित्व की ही उपशाखा है। चूंकि केंद्रीय बैंक एक 'स्वामी-सेवक संबंध' व्यवस्था में समाज के सेवक की भूमिका में है अतः निर्णयों एवं मुद्रानीति पर विशद चर्चा जरूरी है तथा कई मामलों में यह देखा गया कि उनको प्रदत्त आदेश की बेहतर अनुपालन के लिए उनको स्वायत्त हैसियत प्रदान की गई। पारदर्शिता केंद्रीय बैंक का द्वितीयक परन्तु महत्वपूर्ण लक्ष्य है। इसका कारण यह है कि केन्द्रीय बैंक का उत्तरदायित्व मुद्रानीति संबंधी उसके प्राथमिक लक्ष्यों की प्राप्ति पर केंद्रित है जिससे पारदर्शिता उनके मुख्य कार्य एवं लक्ष्यों की अनुषंगी बन जाती है (इसिंग, 2005)।

3.135 जब संस्थाएं एवं बाजार सहभागी सुविज्ञ निर्णय लेते हैं तब ही वित्तीय प्रणाली की स्थिरता सुनिश्चित की जा सकती है। पर्याप्त सूचना प्रकटीकरण मनमानी मुद्रा नीति, असामयिकता एवं अत्यधिक जोखिम उठाने की प्रवृत्ति की रोकथाम करता है। इससे बाजार भागीदारों को वित्तीय करारों की लागत एवं निष्ठा के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में मदद मिलती है। पारदर्शिता अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण है। प्रथम, यदि सामान्यजन नीति के लक्ष्यों एवं उपकरणों को समझें तथा केंद्रीय बैंक एवं वित्तीय संस्थाएं उन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु विश्वसनीय वचन दें तो मुद्रा नीति अधिक प्रभावकारी बनेगी। दूसरे, सुशासन की दृष्टि से, विशेषकर जब केंद्रीय बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं को उच्च स्तरीय स्वायत्तता दी गई है, इनका पारदर्शी एवं उत्तरदायी होना आवश्यक है। इस समय नीति निर्माताओं की यह आम राय है कि न सिर्फ जनता के प्रति जवाबदेही के तौर पर बल्कि उनके द्वारा चुनी गई नीतयों की सफलता के लिए भी अच्छा संप्रेषण एवं पारदर्शिता लाभकारी है।

3.136 मुद्रा नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भी केंद्रीय बैंक की पारदर्शिता आवश्यक है। केंद्रीय बैंक के लक्ष्यों के बारे में सूचना एवं मुद्रानीति के परिचालन का ब्यौरा यथा ब्याज दरों में परिवर्तन आदि की

सूचना आवश्यक है क्यों कि इससे जन प्रत्याशा को संदर्भ मिलना है। तर्कसंगत प्रत्याशा के परिप्रेक्ष्य में मुद्रा नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति में इन प्रत्याशाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है (किडलैण्ड एवं प्रेस्काट, 1977)। मूल्य स्थिरता के प्रति निष्ठा एवं विश्वसनीय मुद्रा नीति से प्रत्याशाओं को संदर्भ मिलता है (प्यानाल्टो, 2005)। आधुनिक साहित्य भी यह संकेत देता है कि पारदर्शिता वित्तीय बाजार सहभागियों की अनिश्चितता घटाती है (ब्लाइंडर एवं अन्य, 2001)।

3.137 परिचालन में पारदर्शिता बढ़ाने के लिए सर्व श्रेष्ठ व्यवहारों एवं नियमों को लागू करके अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संरचना को मजबूत करने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। इन प्रयासों को पहली बार 1995 में जी-7 के हेलिफेक्स शिखर सम्मेलन में महत्व दिया गया। पूर्व एशिया संकट के बाद इन प्रयासों पर ज्यादा ध्यान दिया गया। अप्रैल 1998 में वाशिंग्टन में वित्त मंत्रियों एवं केंद्रीय बैंक गवर्नरों का सम्मेलन हुआ तथा उसमें तीन क्षेत्रों : पारदर्शिता एवं जवाबदेही में वृद्धि, घरेलू वित्तीय प्रणालियों का मजबूतीकरण एवं अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संकटों का सामना के लिए कार्यदल गठित किए गए।

3.138 केंद्रीय बैंकों के वांछनीय पारदर्शिता व्यवहार को और मजबूत आधार प्रदान करने हेतु अं. मु. कोष ने मार्च 2000 में एलरिक संरचना के नाम से प्रसिद्ध एक मुद्रा एवं वित्तीय नीतियों में पारदर्शिता संबंधी श्रेष्ठ व्यवहार संहिता का निर्माण किया। केन्द्रीय बैंक शासन के परिप्रेक्ष्य में एलरिक (इएलआरआइसी) संक्षिप्ताक्षर का संदर्भ पांच क्षेत्रों से है : बाह्य लेखा परीक्षा तंत्र, विधायी संरचना एवं स्वायत्तता, वित्तीय सूचना प्रेषण, आंतरिक लेखा परीक्षा प्रणाली एवं आंतरिक नियंत्रण तंत्र। एलरिक संरचना अंतरराष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानकों, अंतरराष्ट्रीय लेखा परीक्षा मानकों, आंतरिक लेखा परीक्षक संस्थान द्वारा जारी मार्गदर्शी सिद्धांतों एवं अं.मु.के. के डाटा प्रसार मानकों को संदर्भ के रूप में प्रयोग करती है। इस संरचना के अनुसार अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा की गई संरक्षा प्रक्रिया के अंतर्गत केंद्रीय बैंक के नियंत्रण एवं शासन पहलुओं का आकलन एक निदान प्रक्रिया है। एलरिक संरचना के अंतर्गत संरक्षा आकलन प्रक्रिया केंद्रीय बैंक के परिचालनों में दोषों की पहचान कर उसके बारे में रिपोर्ट बनाती है तथा उनके प्रभावों को कम करने के लिए सुझाव देती है। सिफारिशों में क्रियान्वयन की समय सीमा भी प्रस्तावित की जाती है।

3.139 मुद्रा नीति के निर्माण में प्रयुक्त विवेकाधिकार स्तर के अनुरूप पारदर्शिता एवं संप्रेषण की आवश्यकता बढ़ जाती है। साहित्य में जिस प्रश्न पर चर्चा हो रही है वह यह नहीं है कि क्या पारदर्शिता हो या नहीं बल्कि यह है कि पारदर्शिता का स्तर कितना ऊंचा हो। पारदर्शिता का अर्थ आंकड़ों एवं सूचना का प्रसार है। वस्तुनिष्ठ आंकड़ों के प्रकाशन को अत्यन्त वांछनीय समझा जाता है क्योंकि यह सामान्य जन को विश्लेषण एवं स्वतंत्र मत निर्माण में समर्थ बनाता है। हालांकि प्रदत्त सूचना के आधार पर व्यकलन करने तथा मत निर्माण की सामान्य जन की क्षमता के बारे आंशका व्यक्त की जाती हैं; परंतु अधिक गंभीर प्रश्न का संबंध आंकड़ों की बाढ़ से है जिससे सामान्य जन की मति भ्रमित होती है तथा नीति निर्माण में महत्वपूर्ण आंकड़े उनकी दृष्टि से ओझल हो जाते हैं (इंसिंग, 2005)।

केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता

3.140 केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता का निहितार्थ यह है कि वह केंद्रीय बैंक मूल्य स्थिरता एवं वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए निरंतर अथक प्रयास करने वाले निकाय के रूप में विख्यात हो। काल्वो (1978) एवं किडलैण्ड तथा प्रेस्कोट (1977) द्वारा वर्णित काल असातत्य समस्या के प्रसंग में बैंक की विश्वसनीयता महत्वपूर्ण है। अपने वचन का पालन करने तथा वचन पालन में असफल होने की स्थितियों उनको देय क्रमशः पारितोषिक एवं दंड विधान के लिए विभिन्न संस्थागत व्यवस्थाएं स्थापित की जा सकती हैं। दूसरे, केंद्रीय बैंकों को दिए गए उपकरणों की रूपरेखा इस प्रकार की हो कि केंद्रीय बैंकों की विस्मयकारक कार्यवाही करने की क्षमता सीमित हो। इन दोनो व्यवस्थाओं के क्रियान्वयन के लिए केंद्रीय बैंक को स्वायत्तता देना आवश्यक है। संस्थागत बाध्यताओं के अभाव के बावजूद सामाजिक दृष्टि से इष्टतम परिणामों की उपलब्धता सुनिश्चित करना अपने आप में एक शक्तिशाली उत्प्रेरक हो सकता है (चांग, 1998)। यदि केंद्रीय बैंक की निम्न मुद्रास्फीति के प्रति वचनबद्ध एवं उसके अनुरक्षण में सक्षम, दोनों रूपों में अच्छी प्रतिष्ठा है तो मुद्रास्फीति प्रत्याशा का स्तर निम्न रहता है जिसके फलस्वरूप मूल्यों एवं मेहनताने में वृद्धि निम्न एवं स्थिर मुद्रास्फीति दर के अनुरूप होती है। इसके विपरीत विश्वसनीयता के अभाव में मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं स्वयं - फलित बन जाती हैं।

3.141 यह नोट करने योग्य बात है कि चूंकि केंद्रीय बैंक की विश्सनीयता का मापन कठिन है अतः इसका एवं केंद्रीय बैंक स्वायत्तता एवं निम्नतर मुद्रास्फीति दर से अनुभवजन्य संबंध स्थापित करना मुश्किल है। परन्तु, मूल्य स्थिरता के प्रति सशक्त निष्ठा से अधिक मूल्य स्थिरता प्राप्य है (गैगनन एवं इहरिग, 2004)। केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता मुद्रास्फीति प्रत्याशा को संदर्भ प्रदान करने में सहायता करती है जो, जैसा कि लेक्सटन एवं एनदियाय (2002) ने प्रमाणित किया, मुद्रास्फीति के वर्तमान स्तर के लिए महत्वपूर्ण है।

IV. निष्कर्ष

3.142 समय के साथ केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धान्तों एवं व्यवहार में भारी परिवर्तन हुआ है। इस अध्याय में उसका वर्णन एवं प्रमुख सहयोगी कारकों के बारे में चर्चा की गई। चूंकि केंद्रीय बैंकिंग व्यवस्थाओं ने अपनी अर्थव्यवस्थाओं की आवश्यकताओं के अनुरूप अपना अनुकूलन किया है, अतः केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धान्त एवं व्यवहार में पारस्परिक लाभप्रद संबंध रहा है। आर्थिक वास्तविकताओं के अनुरूप दुनिया में संस्थागत व्यवस्थाओं में भिन्नताएं थीं। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में पहले से विद्यमान बैंकिंग प्रणाली को सहारा देने एवं पर्यवेक्षण के लिए केंद्रीय बैंकों की स्थापना हुई जबकि विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों को पहले बैंकिंग प्रणाली एवं वित्तीय बाजारों का विकास करना पड़ा तथा तदुपरान्त उनकी प्रभावी निगरानी एवं पर्यवेक्षण के लिए नियामक संरचना की स्थापना करनी पड़ी।

3.143 महान मंदी एवं केंस के सामान्य सिद्धान्त के प्रतिपादन समय तक सारे संसार में केंद्रीय बैंकिंग एवं मौद्रिक नीति पर ध्यान केंद्रित था; इसके बाद दो दशक तक राजकोषीय नीति के उत्कर्ष से मौद्रिक नीति संबंधी पृष्ठभूमि में चले गए। 1960 के दशक में मुद्रास्फीति एवं विकास अदलाबदली सिद्धान्त में रुचि बढ़ी - फिलिप्स कर्व मुद्रास्फीति एवं बेरोजगारी के बीच विपरीत संबंध को प्रदर्शित करती थी। मुद्रास्फीति दबाव की आशंकाओं के कारण मौद्रिक नीति पुनः आर्थिक नीति का प्रमुख अंश बनी। 1970 के दशक में मूल्य स्थिरता लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अधिकांश देशों ने मुद्रा लक्ष्य दृष्टिकोण को अपनाया। कुछ छोटी मुक्त अर्थव्यवस्थाओं ने निम्न-स्फीति विश्वसनीयता उधार लेने हेतु अपनी मुद्राओं को अधिक शक्तिशाली मुद्राओं के साथ कील बंद किया।

3.144 प्रत्येक संकट के बाद केंद्रीय बैंकिंग गतिविधियों के दायरे का विस्तार हुआ है। केंद्रीय बैंक कार्यों में परिचालन क्षेत्र का विस्तार हुआ तथा उनकी अंतर्निहित वस्तु में सुधार हुआ है। लघु अवधि आर्थिक उतार-चढ़ाव के स्थिरण तथा विकास एवं मुद्रास्फीति के वांछित रास्ते से विपथन के निवारण में मुद्रानीति एवं केंद्रीय बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बैंकिंग परिचालनों के तरीकों एवं ब्यौरे में समय के साथ बदलाव आए हैं, उन्होने प्रत्यक्ष उपकरणों का त्याग कर अप्रत्यक्ष उपकरण अपना लिए हैं। पीछे हटने की आवश्यकता से बचने एवं लाभों को समेकित करने हेतु इस संक्रमण की गति क्रमिक एवं सावधानीपूर्ण होनी जरूरी थी।

3.145 केंद्रीय बैंक के कई कार्य संबंधित क्षेत्रों में अग्रणी बने हैं। उदाहरणार्थ, विनिमय के माध्यम की स्थापना का कार्य आगे चलकर विभिन्न भूमिकाओं, यथा मुद्रा प्रबंध तथा मुद्रा के बाह्य एवं आंतरिक मूल्य का अनुरक्षण में बंट गया है। अंतिम ऋणदाता की भूमिका का विकास हुआ तथा विस्तार के बाद यह बैंकिंग क्षेत्र के नियामक एवं पर्यवेक्षी तथा वित्तीय स्थायित्व के पहरेदार की भूमिका में बंट गया है। चूंकि विभिन्न बाजार विश्व स्तर पर लगातार अधिक समेकित हो रहे हैं तथा वित्तीय संकट अत्यधिक तीव्र गति से फैल सकते हैं अतः वित्तीय क्षेत्र का पर्यवेक्षण बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। छूत ने प्रभावकारी पर्यवेक्षण एवं अंतरराष्ट्रीय मानकों एवं संहिताओं के पालन की आवश्यकता को रेखांकित किया है। यह बाजार सहभागियों की प्रत्याशा को कीलल बंद करने तथा अधिक स्थिरता के लिए मुद्रानीति में अधिक पारदर्शिता की आवश्यकता को रेखांकित करता है। केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता अपने आप में स्थिरता लाने वाला कारण है जो बाजार प्रत्याशा का निरुपण करता है।

3.146 अनेक केंद्रीय बैंकों का जन्म सरकार के वित्त के प्रबंध के लिए एक संस्था की आवश्यकता से हुआ। सरकारी ऋण का प्रबंध एक ऐसा कार्य था जिसमें केंद्रीय बैंक को विभिन्न प्रकार के राजकोषीय लेन-देन करने पड़ते थे तथा जिससे अनुषंगी कार्यों के निष्पादन हेतु एक संस्था-संरचना का विकास हुआ। संबंधित सरकारों की राजस्व एवं व्यय बेमेलता की कठिनाई के हल के लिए उनको द्रवता आपूर्ति की कुछ व्यवस्था की गई है तथापि लगातार घाटे के वित्तपोषण से बचा जाता है। कुछ देशों ने सरकार को ऋण देने का व्यवहार बंद करने एवं अपनी मौद्रिक नीति की प्रभाकारिता बढ़ाने हेतु अधिनियम पारित किए हैं। अतः निजी क्षेत्र सरकार को उत्तरोत्तर ज्यादा ऋण देता है।

3.147 अनेक विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय क्षेत्र सुधार हेतु प्रयास शुरू किए हैं। यह भूमिका इसलिए धारण की गई कि उत्तरोत्तर रूप से यह स्पष्ट होता जा रहा है कि संसाधनों के दक्ष आबंटन के लिए प्रतिस्पर्धी वित्तीय बाजारों की आवश्यकता है तथा वित्तीय बाजार की असफलता से उत्पादन की गंभीर हानि होती है। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों ने बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्रों के विकास में योगदान दिया है तथा उनको विकसित देशों में उनके समस्थानकों के स्तर तक विकसित होने में मदद की। इसके लिए उन्होंने अपने बाजारों एवं संस्थाओं के विकास को प्रोत्साहन दिया। प्रणाली एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति कर संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाएं एवं विकासशील देश अग्रणी बने तथा इस प्रकार अपने एवं विकसित देशों में अपने समस्थानकों के बीच के अंतर को कम किया। उन्होंने अपने वित्तीय क्षेत्रों का समेकन किया तथा अब उन्हें अपने वित्तीय बाजारों के भिन्न क्षेत्रों में अलग परिचालन की आवश्यकता नहीं पड़ती। संप्रति अधिकांश केंद्रीय बैंक लघु अवधि ब्याज दर का प्रमुख उपकरण के तौर पर प्रयोग करते हैं। वित्तीय बाजारों के विकास ने केंद्रीय बैंकों को मुद्रानीति दक्षता प्राप्त करने में समर्थ

बनाया। एकल दर परिवर्तन या एक घोषणा बाजारों को अनुशासित करने के लिये पर्याप्त होती है। चूंकि आर्थिक गतिविधियाँ महत्वपूर्ण तरीके से मुद्रानीति कार्यवाही पर निर्भर करती हैं अतः उनका प्रारंभ बहुत सावधानी पूर्वक किया जाता है। जैसे-जैसे वित्तीय प्रणाली का विकास होता है वह उत्तरोत्तर जटिल होती जाती है तथा यह आशा की जाती है कि वह केंद्रीय बैंक की वास्तविक आभासी कार्यवाही के प्रति तुरंत प्रतिक्रिया करे। वैश्विक बाजारों के एकीकरण से केंद्रीय बैंकिंग लगातार अधिक चुनौतीपूर्ण होती जा रही है।

3.148 मुद्रास्फीति की दर को कम बनाए रखना अधिकांश केंद्रीय बैंकों को प्रदत्त मूलभूत जिम्मेदारी है। इस भूमिका के निर्वाह हेतु केंद्रीय बैंक को समुचित लक्ष्यों, उपकरणों एवं संरचनाओं का चयन करना पड़ता है। इस चयन से संबंधित कठिनाइयों का अलग-अलग देशों एवं एक ही देश में अलग-अलग कालों में विभिन्न तरीकों से समाधान किया जाता है। अनुभवजन्य साक्ष्य से प्रतीत होता है कि पर्याप्त स्वायत्तता एवं उत्तरदायित्व युक्त केंद्रीय बैंकों ने मौद्रिक नीति की विभिन्न संरचनाओं में अच्छा कार्य किया है। केंद्रीय बैंक के परिचालन के दो महत्वपूर्ण पहलू देखे गए हैं। दीर्घावधि क्षितिज पर केंद्रित ध्यान एवं नीति परिचालनों की पारदर्शिता हैं।

3.149 वर्तमान समय में केंद्रीय बैंक वित्तीय प्रणाली के केंद्र में स्थित है। इस बात पर विचार करते हुए कि बीसवीं सदी की शुरुआत में मुक्त बैंकिंग को पर्याप्त समर्थन प्राप्त था, केंद्रीय बैंकों ने बहुत विकास किया है। केंद्रीय बैंक का मौद्रिक नीति के मुद्रास्फीति एवं विकास संबंधी पहलुओं पर सघन ध्यान रहा है। केंद्रीय बैंक द्वारा संपादित कार्यों के दायरे एवं गुणवत्ता में पर्याप्त वृद्धि हुई है। एक ओर इनमें से कुछ को सफलतापूर्वक पृथक किया गया वहीं दूसरी ओर कुछ कार्यों जैसे वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करना एवं वित्तीय क्षेत्र का विकास को आगे बढ़ कर अपनाया गया। केंद्रीय बैंक बहु कार्य संस्थाओं के रूप में स्थूल आर्थिक नीति निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहेंगे। अपनी वित्तीय संरचनाओं का आवश्यकता के अनुसार वे शायद एक प्रतिमान छोड़ कर दूसरा प्रतिमान अपनाते रहेंगे पर अभी यह संभव नहीं लगता है कि वे मंच केंद्र का त्याग करेंगे।